मैं तुम्हारा स्वर

०

मंगल सक्सेना

०

अंजलि [illegible] प्रकाशन
३३४ तोपदड़ा, अजमेर

मैं तुम्हारा स्वर
(काव्य)
मंगल सक्सेना

प्रकाशक
अंजलि [illegible] प्रकाशन
३३४ तोपदड़ा, अजमेर

मुद्रक
प्रतापसिंह लूणिया
जॉब प्रिंटिंग प्रेस,
ब्रह्मपुरी, अजमेर

मूल्य : पाँच रुपये
आवरण : प्रकाश वर्मा

'बा' को

जिन्होंने परतन्त्रता को
सभी यातनाएँ झेलीं
मगर स्वाधीन साँस ली

ज़िन्दगी से तो नहीं है मोह
पर माँ ! !
तुम जिलाओ और मैं जीयूँ नहीं ! !

प्रथम खंड

द्वितीय खंड

तृतीय खंड

चतुर्थ खंड

भीड़ भरा एकाकीपन
और दाहक जिज्ञासा

कड़कड़ाती बिजली के अनगिनती गिलास
एक घूँट में पी जाने वाले बादल
चिलचिलाती धूप को सोख्ते की तरह एक क्षण में
चूस जाने वाले बादल
कहाँ छुपा रखी है तूने इतनी आग, इतनी ताक़त
इतनी रौशनी
और क्यों
और कैसे बरसाता है इतनी मीठी जलधार

युद्ध का आतंक

मैंने कभी युद्ध नहीं देखा
क्या वह इतना ही त्रासदायक है
जितना उसका आतंक ?

कभी अपने खून को बहुत ठंडा
कभी बहुत गर्म महसूस करना
और यह प्रतीक्षा करना कि कब बम गिरे
जीने से कहीं आसान हो जाए मरना !

विशाल हवाईजहाजों का
उँगलियों की पोरों को चीर कर
कानों में उतर जाना
हतभाग्य, अधूरी कब्र-सी खाई में पड़े

धड़कते सीने पर मुर्दा माँस का बोझ उठाए
उन शब्दों को भिंचे हुए दाँतो में सड़ने देना
कि 'मेरी प्रिया, मेरे रहते तेरा कोई क्या बिगाड़ सकता है?'
और पास की खाई तक फैले हुए खून में
सने हुए गजरों पर नज़र का पछाड़ खाकर मर जाना !
शर्म के आवेग मे भी अवश तनी गर्दन को झुका नही पाना
और दिल के चीथड़े करके जलते हुए मलबे में फेंक देना !

संकल्प से नही
'सायरन' की आवाज़ पर गतिमान होना !
और यह सोचना कि किसी अखबार के कोने में
छपी सूची का एक नाम होने मे
और इस अस्तित्व को ढोने में
इतना ही फ़र्क़ है
जितना हॉकर के हाथों मे बिकते अखबार में
और पाठक की नजरों से गुज़रे समाचार में !

शासकों के वक्तव्य सुनकर
यह फ़िज़ूल समझना कि जीने का अर्थ ढूंढा जाए
नेताओ पर गर्व करने की बात कहना
और मन में पछताना
कि न युद्ध होता है, न युद्ध मिटता है
एक सिर्फ़ ऐलान सारी देह की नसों में गूंजता है

'शान्ति के लिए युद्ध करेंगे'
और कपाल को फोड़कर प्रश्न बाहर आते हैं।
भयानक पक्षियों की तरह फड़फड़ाते हैं
'कब, कब, कब ???'
'शान्ति के लिये युद्ध करेंगे, लेकिन कब ? लेकिन कब ?'

और अपने ही हाथ, अपने ही हाथ को मरोड़ने लगते हैं !
क्या युद्ध इन्हें मरोड़कर तोड़ देगा ?
या इस मरोड़ने से मुक्ति दिलाएगा ?

मैंने कभी युद्ध नहीं देखा।
क्या वह इतना ही त्रासदायक है
जितना उसका आतंक ?

साँझ पड़ते ही

साँझ पड़ते ही
भटकने को निकल पड़ती है मेरी रूह !
साँझ पड़ते ही

दंश अनगिन झेलती है
विषधरों से खेलती है
जहर चढ़ते ही
भटकने को निकल पड़ती है मेरी रूह !
साँझ पड़ते ही

कभी उस ओर जाती है जहाँ आकाश के शमशान कोने में
सभी के दम्भ की झंकार पहने मातमी छाया
समय खोती है रोने में

कभी इस ओर आती है जहाँ निश्वास की बेचैन जाली में
सभी की प्यास की बेसुध चमेली ताकती रहती
पिया को चाँद-प्याली मे

छोड़ सूना शंख-सा, क्षण--
दिवस के तट खण्ड दर्पण
काँच गड़ते ही भटकने को निकल पड़ती है मेरी रूह !
साँझ पड़ते ही

कभी ऊपर चली जाती जहाँ शतकोटि रूहो के सरोवर मे
पतन शतदल खिला होता किरण घर वेष विधवा का
गिराती केश पोखर में
कभी नीचे उतर आती जहा कल पत्थरों का खेत बोती है
गली-कूचों को छिटकी डालियों से आदमी झरते
झुलसती हवा ढोती है!

केंचुली सी छोड़ती है
मोह-बंधन तोड़ती है
साँच पड़ते ही भटकने को निकल पड़ती है मेरी रूह !
साँझ पड़ते ही !

गीत

गंधों के देवता !
फिर मुझे सँवार लो !!
सँकरी सुविधाओं से
फिर मुझे बुहार लो !!

गली-गली, चौराहे, नीमों पर भूल रहे
ओ मेरे सम्बंधी ! मुझको ही भूल रहे

आवारा सज्जनता !
मुझे भी उबार लो
जीने से ऊब गया
अंगना उतार लो !

गंधों के देवता !

तुम तो सर्वांग मधुर वास बने रहते हो
देते हो तृप्ति और प्यास बने रहते हो

सुखदाई आकुलता !
अब मुझे पुकार लो
तन-मन तो टूट रहा
प्राण भी उधार लो !

गंधों के देवता !
फिर मुझे सँवार लो !!

परिचय का अनगिना दिन

आज भी मैं उसी तरह आया
जैसे और दिनों भी आता रहता था
आज भी तुम्हारे कानों का मोती
सिर के कुतूहलपूर्ण झटके से हिला
मेरे स्वागत में जिस तरह और दिन भी हिलता रहता था

इसी तरह मैं अनगिन दिन आया हूँ
इसी तरह तुमने कौतूहल से देखा है
इसी तरह मैं तुम्हारी मुद्रा से भरमाया हूँ
तुमने सिर पर आँचल ढँका है और ढलकाया है
इसी तरह उत्तर जानी हुई आंखों ने प्रश्नों से देखा है
कमरे की नीरवता में
मेरी नजरें घूमी हैं।

तुमने सहारा दे कर
उन्हें अपनी नजरों पर टिकाया है
वो मुझसे पूछा है जो मैं सच नहीं कहता हूँ
जिसे तुम सबसे कहती हो
वही झूठ मुझे भी बताया है
तुमने चुहल की है, मैंने जवाब दिया है
तुम्हारी बातों ने मेरी बातों को शबाब दिया है
और इस तरह यूँ लगा है कि
तन्हाई के ठहरेपन में
तुम्हारे होठों से शब्दों के ढुलकते फूल
मुझे कहीं दूर लिये उड़ते ही चले जाएँ
कि जैसे रत्नगर्भा-सागर की तलहटी में
जलपरियों के देश के जादू दरवाजे
किसी के स्वागत में खुलते ही चले जाएँ

मगर तब अचानक ठोकर लगती है
उड़ते हुए मन को
शीशे की छत से जूझते-से, टूटते-से
लगते हैं पंख सारे
फूलों की राह जैसे मूल मे जा रुके
रस में निमग्न-तन से छिटकता-सा प्राण यह !
कसैला-सा स्वाद लिये
चौंक-चौंक, सिमिट-सिमिट

कहीं झुके, कही छुपे !
तुमने भी जाना है और मैंने भी जाना है
जीवन से दूर आकर राह नहीं पाना है
फिर भी न जाने क्यों
अपनी विवशताएँ
अपनी उलझनें
अपनी तमन्नायें
मैंने पूछी नही
तुमने बताई नही !

और जाने कैसे, कब, नजरों की शरारत यूँ
तन की हरारत तो बन जाती है
मीठे ज़हर की दर्दीली तरंगों के ज्वार में
मन की ही टूटी नैया
हिचकोले खाती है
न पार जा पाती है
न डूब पाती है !
सोचने मैं लगता हूँ
कि कौन से आवरण में लिपटा यथार्थ है यह
कि ओस की बूँदों की तरह
नम और ताज़ा
न तुम अपने आप को अर्पित कर पाती हो
न मैं अपने आप को समर्पित कर पाता हूँ !

परिचय के आज इस अनगिने दिन भी
यह भ्रम न जाने क्यों तुम पालती ही जाती हो
कि मैं सारे सुखों का सौदागर आता हूँ
कि एक दिन अटकते-अटकते कण्ठ से
कुछ कहने न पाऊँगा कि तुम्हारे गले में
नौलखे हार को बरजोरी डाल दूंगा
वैभव के हज़ार रंग नज़रों पै वार दूंगा ?
और तुम मगन हो बनती-सँवरती
सहेलियों को विदा कह
ईर्ष्यालु नज़रें सह
अहम् को तुष्ट किये
दूर-दूर-दूर- किसी सोने के महल में
उड़ते घोड़े पर बैठ
मेरी बाँहों में ऐंठ
श्वेत परियों से हार पहन
वीरता दिखाने की भ्रांति करती सहन
कमलों के तालवाले हरित उद्यान में
आओगी-उतरोगी
और मैं नकेल पकड़ अश्व-ऐश्वर्य की
मणियों से लदे समय-वृक्ष से बाँध दूंगा !
कमलों के ताल में तुम पाँव डुबा
मानिनी, अभिमानिनी बन

कनखी से देख-देख
लजाओगी, बोलोगी नहीं
(गगन से होगी पुष्प वर्षा तभी !)

आज भी मैं आया हूँ
और जानता हूँ तुम नित्य चिंताओं के सागर में
डूबती ही जाती हो
और क्वाँरी उम्र से नित ऊबती ही जाती हो !
लेकिन तुमने चंचलता का अभिनय पूरी सफलता से किया है !
आज भी मैं आया हूँ

और जानती हो तुम नित्य छीजता ही जाता हूँ मैं
चित्त में छुपे एक राज-विलासी से
नित खीजता ही जाता हूँ मैं
फिर भी निराले एक विजेता-सा अभिनय
मैंने सफलता से किया है !
जानता हूँ, जाने के बाद मेरे
ढेर सारे दर्द से दबोगी-कराहोगी
लेकिन कभी स्वार्थ अपना मुझसे कहोगी नहीं !
लेकिन कभी स्वार्थ मेरा मुझसे सुनोगी नहीं !
अनावृत्त शालीनता स्वीकार लेना
हमने सीखा ही नहीं
सभ्यता प्राचीन है और हम भारवाहक हैं

लीक मिटाये कौन ?
हाथ कटाए कौन ?

लौटते ही मुझे फिर कोई रुलाएगा !
कोई अजाना, जिसने सदा ही रुलाया है !
जिसने मुझे स्वतः कुछ न करना सिखाया है
जिसने मुझे तुमसे मिलाया है
सातरंगों में लिपटा तन तो दिखाया है
मन से विलगाया है
जीवन में उफ् ! यह कैसा दुःख पाया है !!

परिचय के आज इस
अनगिने दिन फिर
तुमने उसी रसभीने हुँकार से—
लौट जाने की वेला में
'हाँ' 'नहीं' बीच गूँथ
उलझन में डाला है
मेरे ही क़दमों की बहक पर टाला है !
यूँ ही फिर आऊँगा
यूँ ही फिर जाऊँगा
जैसा भी हो,
आखिर तो रास्ता
यह भी रसवाला है !

●

आसरा

कुछ लोग
अपने भीतर
शौकिया मछली पकड़ने वाले की तरह
काँटा डोले प्रतीक्षा करते हैं—
जीवन-मूल्य पकड़ में नहीं आते
उनके काँटे की डोर को झटके नहीं लगते
उन्हें मूल्यों की पहचान नही है
वे निश्फल लगन लगाए प्रतीक्षा करते हैं !
और सिगरेटों से, चाय से, सैण्डविच से
और अपनी देह से आसरा मांगते हैं !

कुछ लोग
लुहार की धोकनी की तरह

मन में हवा भरते हैं
उनके लिए यह हवा तूफान बन जाती हैं
वे उड़ते हैं और
दूसरों के स्थिर-मन से आसरा माँगते हैं !

कुछ लोग
कुछ जानते हैं, कुछ मानते हैं
और यही उनके लिए संकट है
वे भी अपने 'मानने' के कोल्हू से बंधे
आँखों पर अपने 'जानने' की पट्टी लगाये
उम्रभर चक्कर काटते हैं
और जीवन के कोड़ों से असरा माँगते हैं !

कुछ लोग
कुछ नहीं जानते हैं, कुछ नहीं मानते हैं
और इस स्थिती पर गर्व करते हैं
इसे बनाये रखने के लिए
समाज से और परिस्थितियों से आसरा माँगते है

और कुछ लोग ऐसे हैं
कि अपनी भावनाओं में गाठें डालते हैं
हर नई गांठ से आसरा माँगते हैं और
निराश होते हैं
और फिर निराशा के सहारे

जीवन के सब खेल बेमजा खेल जाते हैं!
लेकिन मेरे जैसे कुछ लोग
सभी लोगों जैसे होते-होते
सभी से अलग हो जाते हैं
एक की जमात का अनुभव
दूसरे की जमात मे अधिक दिन रुकने नही देता
और एक दिन ऐसा आता है
जब अपने जैसों से भी अलग-थलग--
एकाकी और अटपटे
रुदन और हास की सभी स्थितियो को
चीथड़ों की तरह लपेटे
जिज्ञासाओं को झोलियों की तरह लटकाये
बेघर-बेदर
बेआस, बिना लक्ष्य
भीड़ से आसरा मांगते हैं
कि अभागे पांव,
सूखे कंठ, अपलक नेत्र,
पपड़ी जमे होठ निहाल हो जाएं
कि वे दो आँखें दिख जाएं
जिनके लिए शब्दो में नही कहा जा सकता
प्राण जिनका आसरा मांगते हैं !

कभी कराहे भीड़ भरा एकाकीपन

कभी कराहे अगर किसी का भीड़ भरा एकाकीपन
मेरे गीतों जैसे तुमने मुझे सम्हाला, उसको भी सहलादेना

कभी चिटखकर गगन किसी के नयनों में खुब जाए
दिशा–दिशा से मौसम बरसे सुईयों-सा चुभ जाए
कभी किसी का हर आँसू ही अनजनमा मर जाए
प्राण देह की नस-नस में से बिना पुण्य तर जाए

कभी किसी का, किसी गोद में छुपने को अकुलाए मन
मेरी राहो, जैसे मुझ पर आँचल डाला, उसको भी बहला देना

कभी अंजुरी भरी रहे पर विस्मृति डसे पुजारी को
कभी समर्पित नयनों से भी सूझे खेल शिकारी को
कभी देवता की करुणा का इतना क्रूर प्रहार हो
विष भर जाए भोले मन में अंग अंग अंगार हो

कभी किसी के सहज हृदय पर अंकित हो ज़हरी चुम्बन
ज़ख्मी चाहो, जैसे मुझपर किया उजाला, उसको भी लहलादेना

कभी किसी की रुँधी ज़िंदगी मुक्तिगीत गाना चाहे
घर-घर घुमड़े परिवर्त्तन को आंगन में लाना चाहे
कभी किसी कुचले साहस का एकाकी स्वर व्यंग करे
फुसलाती कसमो से जूझे बधिर दया से जंग करे

कभी किसी की अंतर्ज्वाला सुलगाए तन-मन-जीवन
सजल निगाहो, जैसे मुझ पर अमृत डाला, उसको भी नहलादेना

कभी कराहे अगर किसी का भीड़ भरा एकाकीपन
मेरे गीतो, जैसे तुमने मुझे सम्हाला, उसको भी सहलादेना

जिज्ञासा

आह, जानने की प्यास !
तू असह्य है !
मेरे अस्तित्व की तड़पन-बेकली कोई क्या समझे !

मैं
सुरभित पंखुरियों की गोद में,
केवड़े के निर्झर की उन्मुक्त, उमंगित फुहारों के नीचे,
प्रवालों की मूंगिया किरणों के हल्के प्रकाश में,
जल पंछियों के रेशमी पंखों से ढुलक-ढुलक जाती
बूंदों के मद्धिम-मद्धिम संगीत में,
मलय से महकती मेरे देश की माटी की
परम-पुलक से लहराती पुष्करिणी की तरंगों की
मदलीन मुग्धता में भी

तेरी अगोरती व्याकुल पुकार सुनता हूँ
और तन-मन के सुख में रुक नहीं पाता हूँ
वह मुझे उठाती है
विराट से सूक्ष्म तक भटकाती है
उत्थान के युग-युग विज्ञापित शिखर-गृह से धकेलकर
पतन-तन के पोर-पोर से भी लिपटाती है
ओ मेरी अबूझ प्यास !
यह भी कैसी अजीब बात है
कि मेरा हृदय टीसता है
किन्तु डूबकर तुझमें ही
अक्सर सुकून पाती है मेरी साँस !!

एक प्रेतात्मा की बात

आधीरात होते ही मेरे सिरहाने
रोज एक प्रेतात्मा आती है जगाने
चौंकता नहीं हूँ, सोच-ग्रस्त होता हूँ
अनेक अनुभवों में, मैं व्यस्त होता हूँ
ठिठुरती उंगलियाँ कपोल सहलाती हैं
दो गन्ध-बाँहें भी गले लग जाती हैं
लगता है बर्फीले गहन सुनसान में
उछाला है किसी ने अन्धे आसमान में
प्राणों से सभी कुछ दूर सरक जाता है
गुजरते ही सहसा पल दरक जाता है
इन्द्रियों के अश्व जैसे गिरने से बचे हों
नयन किन्हीं उड़ते सितारों में सचे हों

उसकी हथेलियाँ आँखों पै लाता हूँ
अपनी पुतलियों को पसीजा पाता हूँ
पवन जैसे बांसों के खेत से गुज़रे
किसी अंधे कुएं मे नीचे तक उतरे
ऐसे वो कहती है, "तू भी रोता है !
ठीक है, रोना ही आसान होता है !
क्या है मेरा जो तुझसे छुपा है ?
फिर भी कहने को आवेग उठा है !
मैं तेरे नगर की *आत्मा* की प्यास हूँ !
घुटगई अनकही, वह क्वाँरी साँस हूँ !
मेरा जो तुझसे नैसर्गिक नाता है
वही तो मुझे यहाँ खीचकर लाता है
यद्यपि मैं तेरे गीतों मे गाती हूँ
फिर भी मैं तुझे यही कहने आती हूँ
शिशुओं को नही दिला प्यास का आकार !
जो हमें नही मिला उसे तू मत पुकार !
कण भर भी तृप्ति अगर मैंने पाई है
तो तेरी कलम को मेरी दुहाई है
पीर-प्यास-तड़प को अंतर मे छुपाले !
अधर पर तू हँसी की लताएँ उगाले !!

देख उधर, अंकुर माँओं से लिपटे हैं
आगत से निश्चिन्त, निष्कपट सिमटे हैं

वे कल जागेंगे, तुमसे ही मांगेंगे
गीतों की पतंगें पकड़ने भागेंगे !
क्या उन्हें प्यासों का रुदन भेंट देगा ?
क्या उन्हें पलकों की चुभन भेंट देगा ?
क्या रीती नज़र से बोझिल बनाएगा ?
कच्चे सलौने दिलों को चिटखायेगा ?
क्या तू हठीली, बेसुध, बावरी
तुतली अँगड़ाई की धनुवी तोड़ेगा ?
क्या तू दूधिया दाँतो से छनती
पुरवा-साँसों में साँपों को छोड़ेगा ?
क्या तू पुरखों के यश को सँजोए
गर्वीले सीनों की लगन भुलसाएगा ?
गगन तक निश्शंक उठने को आतुर
कदली-सी बाँहों में घुन बन जाएगा ?
वामन के पाँवों से निश्चयी डगों को
छुपते-से मद्यप की घबराहट सौंपेगा ?
गदराते गेहूँ के पके हुए दानों-से
मुखड़ों की लौ को अकुलाहट सौंपेगा ?
उँगली में अनजाने लिपटती बार-बार
चूनर मे टूटती हिचकियाँ बाँधेगा ?
क्या तू अल्हड़, नटखट कलाई की
खनकती चूड़ी में सिसकियाँ बाँधेगा ?

क्या तू बिंदिया को घुटा दिल देगा ?
कि सिन्दूर को शवों की महफ़िल देगा ?
सहज प्यार को नफ़रत की थापें देगा ?
माँ की गोद को रक्त की छापें देगा ?
बतला ये शिशु क्या अंदर से मर जाएं ?
लाशों के ढेर पर रेंगने को आएं ?"

नहीं-नहीं !! —मैं तभी चीख-सी भरता हूँ
प्रेतात्मा का अपने कंधे पर धरता हूँ
पहले तो ऊँची छत पै जा चढ़ता हूँ
अपनी पीढ़ियों की हकीकत पढ़ता हूँ
फिर एक आग लिये बाहर निकलता हूँ
सड़क पर रात भर आवारा फिरता हूँ !

द्वितीय खण्ड

नियति के फण पर
नवोन्मेष की बाँसुरी

सबके पुण्य, सबके पाप !
सबकी साधना के ताप !
नयनों के अबोले तार !
युग के मनुज ! युग के प्यार !
मैं तुम्हारा स्वर, मैं तुम्हारा स्वर !!

●

हम निराला के पुत्र

हम निराला के पुत्र
अपने समाज के समस्त भ्रमों को
तोड़ने के लिए पैदा हुए हैं।

हम दुर्धष, दुर्निवार, नीलकण्ठ !
हमारे प्रत्येक क्षण में
कोटि भ्रम, कुण्ठायें, प्रलोभनों के तन्त्र-जन्त्र
खण्ड-खण्ड हो जाते हैं
और यूं विराट सत्य में परिव्याप्त हमारा क्षण
कल्पातीत है !
इस समाज की तरल-तरंगायित कोमल भावनाओं के
अतल में छुपे

विकराल खूसट कालिया नाग, सुनले !
हम अपार्थिव सत्यों की अपराजेय चाह
धारण किये
वह पार्थिव सत्य है
जो सापेक्षता के लिये वार तो सहते हैं
मगर मरते नहीं !

हम तो *'निराला'* की तरह
नियति का फण बींधते हैं
नवोन्मेष की बाँसुरी बजाते है।

●

कोई अपावन नहीं

तुम चिन्ता क्यों करते हो ?
अब कोई किसीको अपावन नही कहेगा !

हिंसक वृक्षों की लपलपाती डालियों वाले
देवताओं की बात नहीं कहता
मगर इन्सान अब
मात्र अपनी पवित्रता की सुरक्षा में ही
समस्त वृत्तियाँ खर्च नहीं करते !
केवल अपनी पवित्रता के ध्वज को
दिग्विजयी लहराने के लिये
अब मेरे इशारे
दूसरों की नन्हीं पावन पताकाओं पर
बाज की तरह टूट नहीं पड़ते !

ओ प्यार ! सुनो
और सबकी तरह तुम भी पावन हो !
मैं तुम्हारे हर अमोले क्षण की दरार से
फूट पड़ने वाली रस भरी व्यथा को
अपनी वंशी के होठों पर झेलूंगा
मेरी साँसों में
आत्मस्वीकार की सुगन्धि-सा
आडम्बरों से निरावृत्त अपने युग का
शक्तिमान सत्य है !

मैं जब तुम्हारी साध्वी प्यास की वाणी से गूंजूंगा
तो धरती से सनातन पापों की पहचान मिट जाएगी
हमें किसी देवता के सहारे की आकांक्षा न रहेगी !

ज़िन्दगी
पृथ्वी के गोले की तरह—
हर नक्षत्र की पवित्रता की रक्षा करती हुई,
अपने रोम-रोम से प्रस्फुटित प्रबल आकर्षण
के प्रति अनासक्त
सभी के महानदाय के प्रति सम्पूर्णता से
निवेदित

सभी ऋतुओं की ऋचाओं को गुनगुनाती हुई
बिन सहारे, बिन किनारे
कभी बहती रहेगी,
कभी तैरती रहेगी !

तुम चिन्ता क्यों करते हो ?
अब कोई किसी को अपावन नहीं कहेगा
मैं पावनता का कृत्रिम बोध बदल दूंगा !!

समझौता ?

तुम्हारा–मेरा क्या समझौता ?
प्यार है तुम्हारे लिए ऐश के समान
शान दिखाने का एक प्रावधान !
जैसे चाहो, कमाते हो
जब चाहो, गँवाते हो
विकार है करतलों का
रंजन है मनचलों का
जरूरी है ऐसा
जैसे फालतु पैसा
सत्ता की लिप्सा उपयोग में लेती है
तुम्हारी जिन्दगी
मुझे और प्यार को तो खर्च में देती है !
मेरा–तुम्हारा क्या समझौता ?

बौना और विराट

मैं बौना भी हूँ
और विराट भी !
मेरा अन्तर किलकारी भर
किसी गोद में भरना चाह रहा है !

और भरी बाँहों में
किलकारी भरते शिशु को बाँधे खड़ी
सलज यौवना को
आलिङ्गन में कसना चाह रहा है !

मेरी श्वास–रश्मि
शबनम की भी दमक,
गगन की अरुणाभा भी है !

मैं बौना भी हूँ
और विराट भी !!

आषाढ़ का दिन

यही तो है,

यही तो है किसी रेशमी दुपट्टे-सा उड़ आया
आषाढ़ का दिन

जब प्यास जीने को जी चाहता है
जब रक्त में हिरण-टोलियों की कुलाँचें
तैर जाती हैं
और आस-पास जुगनुओं की तरह गीत
उड़ते हैं
जब चुटकी में सारा का सारा दिन लिया
जा सकता है
और चुम्बन के साथ 'उड़ जा फुर्र' कहकर
उड़ाया जा सकता है

जब तुम्हारे तन से लिपटी बयार को
अनथक, अनवरत खींचा जा सकता है
और तुम्हारे बादल छौनों-से पाँवों को
गले से लिपटाया जा सकता है
यही तो है वह किसी रेशमी दुपट्टे-सा
उड़कर आया आषाढ़ का दिन
जिसे मन के सुहाग से बाँधा जाता है
वर्ना जो अचानक काल की गँठरी में
बाँध लिया जाता है !

आषाढ़ की रात

आज ही तो है वह बादली–सी
आषाढ़ की रात
जब बिजलियों के लिये
घोंसलों को खुला छोड़ दिया जाता है
और अपने मुख को हथेलियों में छूपा लेने को,
तुम्हारा इन्तज़ार किया जाता है !

गाँव में संध्या

साँझ बेला !
शंख ध्वनि !
आरती का राग !
श्याम मेघों के हृदय से लिपटता
नारंगिया मधु झाग
मुदित मोरों की 'पियू'
'पियू !'—'पियू !'
ऐसे में उदित हो ज्योति जो
है नमित, पुलकित समर्पित
इस प्राण की कुल आग
मेरी चेतना का राग !

●

गरीबिनी आँखें

जाने कब यह हृदय
अंकुरित हो जाता है !
दर्द फूट, भोलेपन से झांका करता है
बोझिलता की बदराई चट्टान
कपूरी कोहरे-सी उड़ जाती है
मेरी ये गरीबिनी आँखे
प्रतिबिम्बित करती है फिर
आतक तुम्हारा,
सादा और सहज
प्रतिकार हमारा !!

याद

तुम जब तक थी
तब तक तो नहीं
पर, अब
मुझमें – से
तुम्हारी सांसों की सुगन्ध आती है !

और मेरे मन–मृग को
भीतर–बाहर
बहुत भटकाती है !

कहीं गहरे में डूब जाता हूँ !
और फिर ऊब जाता हूँ !!

●

हम बिछुड़े हैं ?

कैसे कहूं कि हम बिछुड़े हैं
अब भी तो वे श्वासें—जिनको
इसी गगन से लेकर तुमने जीया था
मुझसे लिपटी डोल रही हैं
मेरी आहत साँसों में भी
तरूणाई को घोल रही हैं !

तुमने क्या यह नहीं कहा था ?—
'आह न भरना,
अपने चारों ओर लिपटते
कोमल—करुण पवन को पीना,
प्राणों में भर लेना, जीना
इसमें अपना प्यार घुला है !'

यहाँ, वहाँ
ये,
इधर–उधर
सब ओर
तुम्हीं को तो
छू पाने के,
अवलोकन के,
सुन पड़ने के,
उपकरण पड़े हैं !

ये तुमको साकार करें इसलिये
जुड़े हैं मुझसे—
कैसे कहूँ कि हम बिछुड़े हैं ?

●

तुम्हारा स्वर

वासन्ती उर–उपवन की बतराती अमराईयों मे
उमड़ता
दूधिया कछारों के दूरागत लहर–संगीत–सा
तुम्हारे सपनीले स्वर का जादू
मेरे तन–मन–प्राण के
कण–कण में अनुगुंजित हो
मैं–मैं न रहूँ
तुमसे जुड़ा हुआ
गुनगुनाता – गूंजता
ऐसा स्वर रह जाऊँ
जो तुम्हारे प्राणों से
अनवरत आता रहे
दिगन्त व्यापी हो
और तुम्हारे चारों ओर लिपटता
मँडराता रहे ।

सापेक्ष

मुंह को ऊपर किये
हलक मे गिरा रही हो तुम
लोटे से जल !
मैं जाने क्यो देखरहा हूँ
शिव जटाओं के बीच
मुख पार्वती का
गगा बहकर गिर रही है जिससे
ब्रह्मा के भिक्षु-पात्र में !....
.... तुम कितना देती हो !!

हम राजर्षियों के वंशज

राजर्षियों ने तप किया था
सत्य शोधा था
हमारे लिये
हम उपकृत हैं
कभी, जब उन्हें
नसों में महकता महुआ
चिटखता गुलाब,
अँगड़ाती रातरानी का जादुई सैलाब
जगाता था,
अपना फर्ज निभाता था
तो अपने ध्यान से विगलित
उनकी चेतना में समाया
चिन्तकों की ऊँची जमातवाला क्रोध

उफ़न आता था,
यह हमारी समझ में आता है
कि जीवन का एक भाग
क्यों काट दिया जाता था !

राजगुरुओं ने सत्य जाना था
यह अतल सौर-मण्डल
उनका कितना पहचाना था !
किन्तु अपने नेत्रों से जिन्हें पोसा था
उन ज्योतिकणों की नियति के अंधकार से
घबराकर
जब उन्होंने आँखे मूद ली थीं—
उस अन्तराल से भयभीत होकर
उन्होंने हमारे युग को कोसा था
सत्य की शोध,
उनका तप,
उनका ज्ञान,
वहीं रुक गये थे
हमें केवल निरर्थकता, अनिश्चय
विरासत में देने के लिए
बासना विहीन अंगारे की तरह चुक गये थे !

लेकिन उस अन्तराल को हमने पार किया है

अँधेरे को भी प्यार दिया है
हमने विष जिया है
महज़ उस भूल को सुधारने के लिए
जो हमारे बुज़ुर्गों ने की थी
जो काल हमारे भविष्यत का सुन्दर आँगन होता
हमने धुँआले गलियारे की तरह पाया
अपना नर्म पंखों-सा विश्वास खोया
अँधेरे में झपटते हिंसक पजों में
हमने संवेदना के सुकुमार खगकुल को भी लुटाया
मगर फिर भी
अपनी ज्ञान-पिपासु
स्वाधीन शावक-मृगी-आत्मा को
यहाँ तक, उजाले तक पहुँचाया !
और यह भूल
जिसे जानबूझकर करना
हमारे व्यवस्थापक-शासक-पिताओ !तुम्हारे लिये
स्वाभाविक था
अब हमारे लिये सम्भव नहीं है !
तुमने सत्य पाया
किन्तु कृपणता से बांटा
एक इन्सान को वर्गों में काटा, वर्णों में छांटा,
इन्सानियत को अपनी पूंजी बनाया

ओ हमारे ज्ञानी पिताओ !
सत्य देने का मोल
तुमने कितना मँहगा लगाया ?

अब वही युग हमारे शीश पर
शिव के चन्द्र की तरह सुशोभित है
जिसे तुमने कलंकित कहा था
जिसने हमें विराट करुणा और सौहार्द्र का
शारदीय क्षीर-पात्र दिया है,
वही युग
हमारी तपस्या के द्वारा
अतीत के दाग़ से
उन्मोचित है !

हमारी तपस्या
हमारे रक्त की मेघमयी ऊष्मा से खण्डित
नहीं होती !

हमारी तपस्या
अप्सरायें भंग नही करती !
क्योंकि ओ वीतरागी पिताओ !
हम जीवन के प्रति कृपण नही हैं !!
हमारे युग में
वे अप्सरायें सरस उद्यान की
समान स्वाधीन, सत्यायिनी
पुष्पिता सूर्यमुखी चेतनाएँ हैं !

उन्हें अपने तप भंग की
उतनी ही चिन्ता है, जितनी हमे।
वाष्पीय सांसो से
सस्पर्श से बचने की
उनमें भी उतनी ही आतुरता है
जितनी तुम्हारे युग में
पवित्र जिज्ञासा सहने की तपश्चर्या
तोड़ डालने की वेकली
देवताओ के महाराजा इन्द्र को रहती थी!
और आज इन्द्र औंधे मुँह
अपने सिंहासन से नीचे पड़ा है
क्योंकि
अप्सराये हमारी वन्धु हैं
किसी निरकुश की विलास प्रियाएं नही!!

आज हम धरती के नर–नारी
बन्धुत्व की अगाध शक्तियाँ लेकर
अपनी चेतना के विस्तार मे
समस्त सौर मंडल समोये
सम्पूर्ण सत्य पाने को लालायित
तपःलीन, पर्युत्सक,
अपनी सन्तानों के माध्यम बने

भविष्यत को केवल एक परम्परा सौपते है
कि तुम्हें कहे,
'ओ, हमारे मनीषी पिताओ !
हम तुम्हारे कृतज्ञ है !
लेकिन हमे हमारे युग से भी
उतना ही प्यार है !
हम चाहे मर्यादा पुरुषोत्तम न हों
किन्तु हमारा जीवन
हमारे युग का निर्विकार उद्गार है !!'

आधुनिक पोशाकों के विरोधियों से

सुथरी-स्वच्छ गुलाबी पँखुरियों वाली
कमलकली की स्वस्थ गँठीली देह पर
कसी हुई हरी अँखड़ियों-सी निर्मल पोशाकें
मेरे देश की आधुनिक नारियों की
तुम्हे सुहाती नही, मैं जानता हूँ !
क्योंकि मैं पहचानता हूँ
तुम्हारे अंतर मे विराजमान उस
वानप्रस्थी बूढ़े को
जो सदियों से अधूरे आदर्शों के कुचक्रों मे फँसकर
जवानी लगते ही गृहस्थाश्रम त्याग बैठा था
कि जिसके सिर पर शासकों का कृतज्ञ समाजवेत्ता
धार्मिकता और शालीनता के नाम से
निराशा, पलायन और उमगहीनता का

प्रभावशाली तेल मलता था।
और जो आज भी हीनता की अचार जैसी
अनुभूति के
चटखारे लेता है
जिन्हें उसने समझा नहीं
उन वेदों और पुराणों का हवाला देता है !
गालियों के कीच मे
नाक सिकोड़ डुबा लेता है
क्योंकि उन पोशाकों का यही अपराध है
कि वे शरीर की चुस्ती और सामर्थ्य को
निष्कपट भाव से प्रगट करती हैं
किन्तु जिसकी ऊष्मा से बूढ़े फेफड़ों में
खाँसियाँ उठती है !

२

मेरे देश के आर्थिक पिंजरों की
हिंसक चुनौतियाँ स्वीकारने वाली सबलाएँ
समय के यन्त्रों से होड़ लेने वाली गति लिए
घर ही नही
देश की दरारों को भरने की शक्ति लिए
ढीली देहों में विद्युत जगा देने की मुक्ति लिए
अगर आज बीसवीं शताब्दि के उत्तरार्द्ध आँगन मे
स्वाधीन–समर्थ–गतिवान–मेधावी पीढ़ियों की

खगोल छान लेने वाली
महामाया जननी बनने के लिए
बज्जनी कपड़ों के वहमों, अलंकृत आडम्बरों में छुपे
मुँहचोर अत्याचारों को
निर्भीकता से उतार फेंकती हैं
तो तुम्हे प्रसन्नता नहीं होती !
क्योंकि पराधीन होने
और पराधीन बनाने वाली तुम्हारी लिप्सा
प्रगति के पंखों में लटक जाने वाली
तुम्हारी रूढ़िता
प्रणय को ऐश कहने वाली
तुम्हारी सामन्तवादिता
इन्सानियत और नारित्व को
पुरुष की भ्रूकृपा समझने वाली मतान्धता
हरम के रेशमीन पर्दे उठाने को आज भी ललकती
तुम्हारी खयाली उँगलियों की लज्जाहीनता
नारी को पूँजी समझने वाली सर्पिणी नजरों की
विलासिता

मुझे पता है कि
तुम्हारे मानस का—
गौरेया की गर्दन दबोचता बाज़
ठहरे जल में अभी ऊब-डूब रहा है
मरा नहीं !

३

यह भी मैं जानता हूँ कि मेरी साफ़गोई
तुम्हें बुरी लगेगी
क्योंकि तन-वसन और वाणी की सादगी से
तुम्हारा अभिप्राय
खरों जैसे कान
चादरों-से परिधान
और 'जान बख्शी जाए माई लॉर्ड !' वाला
शब्द-ज्ञान रहता है !

लेकिन मैं तुमसे
विनयपूर्वक पूछता हूँ
कि हे, मेरे दुःसाहसी दोस्तो !
मुझे ईमानदारी से बताओ
क्या तुम्हें सुन्दरता हथियाने की आदत नहीं ?
सात आवरणों में छुपा न हो अगर
पूजा-सा पावन रूप
तो क्या उसे कुचल डालना
तुम्हारी माँस पेशियों की बग़ावत नहीं ?

तुम्हे क्यों नही लगता कि
जैसे नक्षत्रों ने तेजस्वी तन
गुलाब की पँखुरियों से लिपटकर शीतल किया हो
और हंसों की त्वचा जैसे परिधान मे
नारी सज्जा धरकर
अनागत को वरण करने के लिए
जीवन की विस्तृत कर्मस्थली मे
तुम्हे साहचर्य दिया हो ?
नक्षत्र-प्रसूनों का समादर करना
अगर तुम्हें नही आया
कुण्ठाओं की काई से
अंत.करण का परिष्कार करना
अगर तुम्हें नही आया
तो मुझे खेद है कि तुम्हारी लाचारी
तुम्हें कच्चे तट के हताश दलदल में दफना देगी !
क्योंकि मानव-सभ्यता की वेगवती धारा
आगामी पीढ़ियों मे
उन महान, शक्तिमान नर-नारियों को
जन्म देने वाली है
जो अपनी विलक्षण प्रतिभा के बल से
पृथ्वी को एक यान की तरह
इस दिगन्ती आकाश में
मनचाही दिशाओं में चलायेंगे

वे समस्त रहस्यों के ज्ञाता
ब्रह्मलीन होने से पूर्व
ब्रह्मा हो जाएँगे !!

तुम्हीं कहो,
तव कम्बलों में लिपटी
अपनी भार्या को
कौनसे घर के अँधेरे कमरे में
कौन से दफ्तर से लौटकर
अपनी संस्कृति का परदादों वाला कोट उतारकर
कौनसी खूँटी पर
टांगने के लिए तुम दोगे ?

लोग जाने कैसे कह देते हैं

लोग जाने कैसे कह देते हैं
कि सुबह–शाम क्षितिज पर
एक–से ही रगों का चक्र नित्य घूमता है ?
कि ऋतुओं का काफ़िला अनादि से अनंत
एक गोल घेरे में
एक–सा ही झूमता है !
कि वही जो बीतता है
किसी अदेखे पहिये पर चढ़ा
अपनी अवधि की उँगली मे अँगूठी–सा अटका
लौटकर फिर–फिर जीवन मे उभरता है
जीवन में डूबता है ।
लोग जाने कैसे कह देते हैं !

मैं हूँ कि झील में झाँकते पहाड़ों के कंधों पर
चढ़े हुए
अगणित आकाश-शिशुओं के तन
दिगन्ती नीलिमा के "शॉल" में लिपटे
देखता हूँ
अनुक्षण जिनके चेहरे पर नूतन परिवर्तन,
अपूर्व रंग आते हैं,
कि वे शिशु जाने क्या हुए जाते है ?

तट से लिपटती काई में भी मैंने
कुछ नया ही पाया है
कि सुबह पहले से ही
कपड़ों से पिटने वाले
धोबी के पत्थरों ने भी
नया ही कुछ गाया है !

लहरों के होठों पर सूखी पपड़ियाँ जमी हैं, उतरी हैं
अनेकानेक भावनाएँ इस पुरानी झील की
तल से तट तक
अजाने हो नितरी हैं
कभी यह लजायी है, सकुची है, सिमटी है
कभी यह ठिठकी है, ठहरी है, सहमी है
कभी यह उट्ठी है गर्वित-सी, दर्पित-सी
गर्जन-से, तर्जन-से भरकर जो बोली है

रोली की आँधी का प्रबल वेग उमड़ा है
हरे-हरे जल से, नील-श्याम नभ तक
अंतर्स्वर अविनाशी
चिर चंचल-काल के चित्त-से पटल पर
करूणा में लिपिबद्ध गहरे तक गड़ा है!

तिनके तक, कंकर तक
पतंगों के पर और कीड़ों के स्वर तक
सभी मे अनोखा, अपरिचित, अपूर्व
नया कुछ पाया है,
नया कुछ जाना है!
लोग जाने कैसे कह देते हैं!

इतिहास के कालजयी जीवन के आदि से
मेरे इस क्षणभगुर जीवन की तरुणाई तक
सूक्ष्म को अपलक, अविश्राम देखा है
विराट से विराटतर परिवर्तन लेखा है!

झील नित अद्‌भुत है।
काई गर ज्यादा है, पानी भी गहरा है।
पक अगर बढ़ता है, पंकज भी बढ़ते हैं।
जलकण की संख्या अजानी है, अकल्पित है।
जल का अहंकार असीम है, अमापित है।
नन्हा-सा जीव मैं झील में पाता हूँ

अपने ही जीवन का रोचक विस्तार
पाता हूँ अपने ही मन के आवर्त्त
जिनमें काई के धागों से कमल कढे हैं।
यहाँ सौरभ के देश में कलिका तो वदी है
किन्तु इच्छा के पार भी अगाध सौंदर्य है !

और मैं निरन्तर महसूस करता हूँ
हलचल जो लौटकर कभी नहीं आती
यान भी बदलता है, मैं यात्री भी बदलता हूँ।
लोग जाने कैसे कह देते हैं

एकरस जीवन मे स्वाद के भ्रम हैं
एक रंग दुनिया में दृष्टि के क्रम हैं
मैंने तो केवल अपूर्व को जीया है
मैंने तो केवल नवीन को पाया है

●

तृतीय खण्ड

फिर भी एक प्रतीक्षा है

दो दुलारी बाहुओं का पालना चला गया
जन्म से जो साथ था वो बचपना चला गया
आज तक भी जो मिला वो अनमना चला गया
अब तो अपने दर्द का पुकारना चला गया

मैं जब थकी हुई साँसों को सहलाने लगता हूँ
जीने की खातिर जीवन को बहलाने लगता हूँ

नटखट है हर दिशा देखकर जाने क्यों मुस्काती है
सरगम की सौगन्ध दर्द को गीतों में ढलवाती है

व्याकुल हृदय सभी को ही एक खिलौना लगता है
भावुक का घायल सपना भी प्रणय बिछौना लगता है

मैंने चाहा सोऊँ, दुश्मन आँख नहीं लग पाती है
मौसम की सौगन्ध नजर भी चन्दा से टकराती है

शबनम की सौगन्ध रातभर नींद नहीं आ पाती है।

निर्मम सत्य सहा जाता है
मुग्धा साँस रीत जाती है
सुख का दिवस गुजर जाता है
दुःख की रात बीत जाती है

हर सम्बन्ध मधुर छलना है
लक्ष्यहीन पथ पर चलना है
चंचल है हर आँचल-छाया
अलकों का हर नशा पराया
जग के मानसरोवर-से मन
तेरे हंस चुगेंगे ऊल-जल

लेकिन कितना भी अकुलाए
सुख से या दुख से बौराए

बालक हिया हुलस जाता है
चंचल आँख भीग जाती है
सुख का दिवस गुजर जाता है
दुःख की रात बीत जाती है

भावुकता का सरवर गहरा
लगा हुआ है उस पर पहरा
कोई डूब नहीं पाता है
रीति-नीति में बँध जाता है
उर-अगोरती साध छूटती
प्यास बुझाती नजर टूटती

लेकिन शाश्वत है यह मेला
लेन-देन का क्रम अलबेला

चातक प्राण हार जाता है
बेसुध प्यास जीत जाती है
कोई कितना ही बहलाए
या कोई भी ना अपनाए

सुख का दिवस गुजर जाता है
दुःख की रात बीत जाती है

हर मौसम से प्यार किया है

पता नही क्यो मुझे सभी ने सुख से बेघरबार किया है
मेरा दोष यही है मैंने हर मौसम से प्यार किया है

फूलों ने तो अलग किया यूं, शूलों को भी दुलराता हूँ
तितली ने यूं गाली दी है, मैं फिर भी तो इतराता हूँ
कोयल ने उपवन यूं छोड़ा, मेरा दर्द बहुत गाता है
सौरभ ने यूं साथ न सौंपा, मेरे श्रम से शर्माता है

लेकिन जाने दुनिया ने क्यों मुझको अस्वीकार किया है
मेरा दोष यही है मैंने दुनिया भरसे प्यार किया है

मुझको दी सौगन्ध सीप ने, मैंने अश्रु नही ढुलकाया
मुझे पपीहे ने टोका तो, मैंने हृदय नही दिखलाया
सागर कुछ ऐसा घबराया, प्यासे-प्राण अधर सी बैठे
कोमल अन्तर देख मेघ का, नभ के अंगारे पी बैठे

लेकिन अब तो सबने मेरी करुणा का व्यापार किया है
मेरा दोष यही है मैंने भावुकता से प्यार किया है

जीवन के सूने रंगों में कोई कब तक राग भरेगा ?
साधों के टूटे मंडप में मजबूरी की माँग भरेगा ?
अपना स्वत्व छूट जाता है जब अपने बेबस करते हैं
मन में बस जाने वाले ही जब मन का सौदा करते हैं

प्यार बाँटने वालों ने ही सम्भव दुर्व्यवहार किया है
मेरा दोष यही है मैंने सौगातों से प्यार किया है

भाग्य इसलिये रूठ गया है, मैं ईश्वर की सृष्टि नहीं हूँ
वैभव का पथ छूट गया है, मैं तृष्णा की तुष्टि नहीं हूँ
सूर्यमुखी सपना टूटा है, क्योंकि अँधेरे को दी आँखें
ताकि अजन्मे सूर्य हजारों, इसी अनिश्चय में से झाँकें

लेकिन जाने किसने विष का जीवन में संचार किया है
मेरा दोष यही है मैंने मानवता से प्यार किया है
पता नहीं क्यों मुझे सभी ने सुख से बेघरबार किया है
मेरा दोष यही है मैंने हर मौसम से प्यार किया है

दुःख के गगन तले भी

दुःख के गगन तले भी साथी ! हँसता गाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चांद बनाता जाता हूँ

इसने शूल चुभाया लेकिन उसने बढ़कर चूम लिया
इसने आँसू की दुनिया दी उसके घर में झूम लिया
किसी वचन ने रूप बदलकर
मन से बाँधा है विष-अम्बर
तभी किसी ने अर्पित स्वर से
अमृत ढोल दिया प्राणों पर

तन सिहरा तो मिली पुलक भी
मन सिहरा तो मिली हुमक भी

भावुक हूँ तो चोट लगेगी
दिवस ठगेगा, रात जगेगी

लेकिन कब तक सह न सकूँगा ?
दुनिया के सँग रह न सकूँगा ?

घाव मिटाता
घाव बढाता
सौ बल खाता

मैं तो अपने रोम-रोम मे हृदय जगाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

दुःख के गगन तले भी साथी ! हँसता गाता जाता हूँ

इसने गलत दिशा दिखलाई लेकिन उसने बाँह गही
इसकी गोद न दुलरा पाई उसकी ममता साथ रही

किसी दिवस ने मन बहका कर
जोर दिया जब मनमानी पर
तभी रात ने रूप ज्योति से
बाँध लिया हर शैतानी पर

धूप मिली तो मिली छाँह भी
पाँव थके तो मिली बाँह भी

साथी हूँ तो साथ छुटेगा
विरह मिलेगा, हृदय घुटेगा

लेकिन मन से मीत रहूँगा
साथी का संगीत रहूँगा

याद बसाता
दिल बहलाता
गीत रचाता

मैं तो अपने पोर-पोर में फूल खिलाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

दु.ख के गगन तले भी साथी ! हँसता गाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

इसने नज़र लगायी लेकिन उसने जहर उतार दिया
इसने सब कुछ लूट लिया पर उसने सब कुछ वार दिया

किसी प्यास को जब आँधी पर
प्यार नहीं मिल पाया पल भर
तभी किसी ने सपनों पर भी
म्हेंदी-सा कर दिया असर

पोर मिली तो मिली प्रीत भी
जलन मिली तो मिला गीत भी

वैर मिटाता
मेल बढ़ाता
मोद मनाता

मैं तो अपने मन-पनघट पर भीड़ बढ़ाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

दु:ख के गगन तले भी साथी ! हँसता-गाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

इसका मैंने कुछ न बिगाड़ा लेकिन इसने शाप दिया
इसका मुझसे अहित हुआ पर इसने सुख चुपचाप दिया

किसी मीत ने अपना बनकर
काट लिया जब जैसे विषधर
तभी किसी ने मुझे जिलाया
अपना दुश्मन खून बेचकर

डग भटके तो बनी राह भी
पग अटके तो मिली चाह भी

मानव हूँ तो मर्म बिंधेगा
दीप बुझेगा, धैर्य डिगेगा
लेकिन सब दिन एक न होंगे
मुझको ही सब क्लेश न होंगे

मेघ हटाता
रात घटाता
भैरव गाता

मैं तो अपने रक्त-बीज से सूर्य उगाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

दुःख के गगन तले भी साथी, हँसता गाता जाता हूँ
मैं तो अपने हर आँसू को चाँद बनाता जाता हूँ

कलियुग से प्यार करो

नवयुग के मेधावी, टूटे मन, महाप्राण !
अर्पित है तुमको ही, मेरा यह गीत-गान !
ओ मेरे गुण निधान !

मान लिया रोगों का
द्वेषों का, युद्धों का
बादल मँडराया है
आकस्मिक विपदा से
अपनी ही दुविधा से
जन-मन घबराया है
लेकिन तुम नहीं डरो
खुद को स्वीकार करो
भरमों से मुक्त हुए
कलियुग को प्यार करो
द्वापर की छायाएँ
नज़रों के पार करो

मोहक है काई पर जीवन है प्रवहमान !
ओ मेरे गुणनिधान !!

गहने-सा पहन लिया
नारों में वहन किया
सच को तो नहीं जिया
पापों में, शापों में
भय के अनुतापों में
जीवन को बाँट लिया
अब नूतन मेधा पर
संशय से नही भरो
आगत के साथ-साथ
चोला भी नया करो
गत युग का हीन भाव
दूर करो, दूर करो

आकृति से बढकर है विकृति क्या शक्तिवान !
ओ मेरे गुणनिधान !!

चंचलता, व्याकुलता
भावों की संकुलता
प्रगति नहीं लाई है
धीमे जो चलते हैं
लालच में पलते हैं
उनकी उपजाई है

मानव को पूर्ण करो
मञ्ज़िल से नहीं डरो
बाँहों में लो विराट
हुलसा कर प्राण-भरो
भीतर का सब कुछ ही
पूजा की भेंट करो
ताजों से मुक्त हुआ, जनयुग का संविधान !
ओ मेरे गुणनिधान ! !

धरती को खोदोगे
अपने को शोधोगे
घन-गुबार छाएगा
भटकेंगी रेखाएँ
तोड़ेंगी सीमाएँ
निराकार आएगा

दोरंगी निष्ठा का
आडम्बर छोड़ दिया
तुमने यह ठीक किया
फँदों को तोड़ दिया
सूना-सा अहंकार
गरिमा-से जोड़ दिया
पौरुष के प्रश्नों का साहस ही समाधान !
ओ मेरे गुण निधान ! !

नवयुग के मेधावी, टूटे मन, महाप्राण !
तुमको ही अर्पित है मेरा यह गीत गान !
ओ मेरे गुण निधान !

मेरे मित्रो

मैं कितना भी अगर बुरा हूँ, फिर भी मेरे मित्रो, मानो
मुझको साथी कह भर दोगे, पथ के शूलों को चुन लूंगा
सारी पीड़ाएँ पी लूंगा !
और कहूँगा वही कि साथी, अनगढ़ पंथ हमारा होगा
मपना सत्य तुम्हारा होगा !

वाणी यदि अनुचर हो जाए, सुख की डोली ले आओगे
आज किसी की जय के बदले तुम सिंहासन पा जाओगे
पर, मेरे ओ मित्रो मानो, सदा तुम्हारी जय बोलूंगा
फिर भी क्रूर घटा ही लूंगा
तुमको चाँद-सितारे दूंगा
और चलूंगा वही कि साथी, ढलता दिवस हमारा होगा
चढ़ता सूर्य तुम्हारा होगा !
पथ के शूलों को चुन लूंगा !

चिन्ता देना ही शुभ समझे, जो मेरे शुभचिन्तक आए
रूठी मेरी हँसी मगर नित गीत मस्तियों के ही गाए

फिर भी, सब शुभचिन्तक सुन लो, द्वार तुम्हारे जब आऊँगा
तुमसे पतझर ही माँगूँगा
तुमको मधुबन ही सौंपूँगा
और रहूँगा वहीं कि साथी, उजड़ा सदन हमारा होगा
महका चमन तुम्हारा होगा
पथ के शूलों को चुन लूँगा

मेरा दर्द अदेखा है वह आँसू की बौछार नहीं है
बिक जाए मरघट के हाथों इतना सस्ता प्यार नहीं है
पर, मेरे सहयोगी बोलो, अहम् तुम्हारा भी झेलूँगा
फिर भी झुकी डालियाँ दूँगा
सुमनों से झोली भर दूँगा
और कहूँगा यही कि साथी, घायल हृदय हमारा होगा
उन्नत भाल तुम्हारा होगा
पथ के शूलों को चुन लूँगा

मैं अपना आकाश बेच दूँ, तुम सारा वैभव देदोगे
गीतों की कोयल बेचूँ तो शायद कुछ कलरव देदोगे
पर, मेरे ओ सभी बन्धुओ, तुमसे बस आजादी लूँगा
बदले में सब कुछ दे दूँगा
अगला जन्म ब्याज लिख दूँगा

और सहूँगा सभी कि साथी, हर बलिदान हमारा होगा
हर सम्मान तुम्हारा होगा !
पथ के शूलो को चुन लूंगा !

अपनी पीर सभी कहते है, मैं भी कुछ कहने वाला था
तुम शायद मुस्काने दोगे, मैं भी कितना मतवाला था

पर, मेरे उपकारी सुन लो, कभी शिकायत नही करूँगा
हर अपमान पलक पर लूंगा
अपनी व्यथा नहीं गाऊँगा
और खिलूंगा यही कि साथी, कुचला कुसुम हमारा होगा
गुंजन भ्रमर तुम्हारा होगा !
पथ के शूलों को चुन लूंगा !
सारी पीड़ाएँ पी लूंगा !
मै कितना भी अगर बुरा हूँ, फिर भी मेरे मित्रो मानो !!

●

देह के धर्म निभाने हैं

अनचाहे ही जिन्हें चढ़ाया
पर जिनका अहसान सवाया
सभी वे कर्ज चुकाने हैं
देह के धरम निभाने हैं!

जिन्दगी अपनी होकर भी पराये नाम लिखी आई
भाग्य अपना कहलाया है लिखावट औरों की पाई
बने जब शायर-सिंह-सपूत जगत ने खाते बिछा दिये
किया जब आँसू का सम्मान, घटा मुस्कानों पर छाई

जिनकी बेल बढ़ाई है
जिनकी करुणा पाई है
जिनकी आशाएँ वर आईं
जिनकी आशीषें सर छाईं

उन्ही के किये, कराने हैं
उन्ही के नाम चलाने है
सत्य से नयन मिलाने हैं !
देह के धरम निभाने हैं !

हवा में इतनी खुश्की है, झाँकता सपना टूट रहा
हृदय ने कोमलता खोई, अधिक अपनापा लूट रहा
ज़माना निर्मम प्रियतम है, नेह नातों मे ढाल रहा
चलन की डोली चढते ही, मिलन का पनघट छूट रहा

जिनकी नाव चलाई है
जिनकी यह ठकुराई है
जिनके पाल दिशा बतलाते
जिनके ध्वज ऊपर लहराते

उन्ही के हुक्म बजाने हैं
नाव को नियम सिखाने हैं
कर्म के ध्वज फहराने हैं !
देह के धरम निभाने हैं !

उमर प्रतिपल युग तोल रही, विवशता का पलड़ा भारी
मौत भी नकली मिलती है, चाह की कैसी लाचारी
प्यास का अनुभव विसरगया, पाप का ऐसा असर हुआ
बहुत पावन था सब अन्तर, देवता ने ठोकर मारी

जिनकी धर्म-दुहाई है
जिनकी अतुल बड़ाई है
जिनके माँगे वस्त्र पहनकर
सारे पाप छुपालें सत्वर
उन्हीं के दिये जलाने हैं
दया के अवसर पाने हैं
ज़रा से पुण्य कमाने है !
देह के धरम निभाने हैं !

अपरिचय के पल आगत के, पीर जानी-पहचानी है
लक्ष्य तो किसने पाया है, पंथ की महिमा गानी है
कृपाओं की बरसातों में, अभावों का छाता ताने
कभी 'भवसागर तरना है,' कभी 'मरजाद निभानी है'

जिनकी धूल रमाई है
जिनकी बोली पाई है
जिनके तीरथ अस्थिदान लें
'मृत्यु चढ़ा असवार' मान लें

उन्हीं के गौरव गाने हैं
विजय के घाव दिखाने हैं !
चिता में फूल खिलाने हैं
देह के धरम निभाने हैं !
अनचाहे ही जिन्हें चढ़ाया पर जिनका अहसान सवाया
सभी वे कर्ज़ चुकाने हैं ! देह के धरम निभाने हैं !

गीत

पीड़ा का हर एक इशारा
जीने का बन गया सहारा
इतना दर्द सह लिया अब तो, नन्ही आयु निहाल होगई !

चांद सितारो की बस्ती में यूं ही रात गुज़र जाती है
कोई याद नहीं आता है, या फिर याद बहुत आती है

जीवन में इतना सूनापन शायद सहन नही हो पाता
लेकिन मित्रों की मस्ती से झोली मालामाल होगई

नन्ही आयु निहाल होगई!

अब इतना ही नेह बहुत है, ज्वाला के सग जोड़ दिया है
अन्तर ने खुद अभिलाषा को चुपके-चुपके तोड़ दिया है

प्यास मगर इतनी पावन है विष की शरण नहीं जा पाला--
लालपरी के बिन भी अपनी सजल कल्पना लाल होगई

नन्ही आयु निहाल होगई !

आगे जीवन में क्या लूंगा अब तक भी अहसान लिये हैं
सबका दिल बहलाया हँसकर, छुपकर आंसू पोंछ लिये हैं

जिसकी चाहत फली उसीके सुख का कण भर दान मिल गया
गरिमा से भरगई आत्मा उर की दृष्टि विशाल होगई

नन्ही आयु निहाल होगई!

गीत

दुख ने इतना तोड़ दिया है
सुख तो झेला नहीं जारहा

जो जीवन में जलन बन गई, ऐसी लगन कहाँ मिटती है ?

पीड़ा से आरम्भ हुआ जब जीवन के बदसगुन राग का
कोई घावों को भरले, पर क्या कर लेगा अमिट दाग़ का ?

चाहों की वरदा समाधि पर चाहे जितने मेले जुड़ लें
जो साँसों में धुआँ बन गई, ऐसी घुटन कहाँ मिटती है ?

ऐसी लगन कहाँ मिटती है ?

हर अनुभव के पोर-पोर से रन्ध्र-रन्ध्र मे दुख रिसता है
आँखों का मस्ती से बढकर भावुक आँसू से रिश्ता है

उल्लासों का उबटन मलकर मन को कितना ही नहला लो
जो युग का अन्तर्मन बनगई ऐसी थकन कहाँ मिटती है ?

ऐसी लगन कहाँ मिटती है ?

रूप-सिन्धु का ज्वार उमड़ता पर करुणा की पुतली प्यासी
प्राणों में है जनम-जनम से यह प्यारी बदनाम उदासी

पापों का जब पहरा बैठा कोई कब तक हृदय बचाए
जो प्रत्याशा पाप बन गई ऐसी चुभन कहां मिटती है ?

ऐसी लगन कहाँ मिटती है ?

ओ संसृति के आशय, मैं हूं कलाकार !

तू अब चाहे या ना चाहे
खुद आए या पास बुलाए
लम्बी आयु सौंपने वाले !
अब तो उमर यहीं बीतेगी
अपनी नजर यहीं रीतेगी

तुझको हठ था मुझे निकाले अपनी रूमानी दुनिया से
तुझको हठ था मुझे निकाले कल्पलताओं की बगिया से
मुझको भी हठ है जीते जी तेरे पास नहीं लौटूंगा
अपने जग की फुलवारी को सौ-सौ स्वर्ग मुफ्त बांटूंगा

मेरी माटी निपट निराली
म्हेंदी में होठों की लाली

यौवन-ज्वार सौंपने वाले !

तेरी इन्द्राणी रीझेगी
अब तो उमर यही बीतेगी
अपनी नजर यहीं रीतेगी

तुझको डर था तेरा शायद मैं हर कौशल नहीं जानलूं !
तेरे जैसी रचना शायद मैं रचने की नहीं ठान लूं !
लेकिन ओ संसृति के आशय! मैं हूँ संस्कृति रचने वाला !
तुझे पता ही नहीं कलामय ! मैं हूँ कलाकार मतवाला !

मेरे ये पनघट के मेले
कोमल कटि, भारी घट झेले

मन को मोह सौंपने वाले !

मछली माया घट बीधेगी
अब तो उमर यहीं बीतेगी
अपनी नजर यही रीतेगी !

तेरे अद्‌भुत प्रजातन्त्र में केवल तू है और न कोई
मेरे एक तन्त्र में केवल तू ही तू है और न कोई
मेरा भोला आत्म समर्पण, तेरे अनुरंजन का कारण
अरे मगर मैं तो मानव की निष्ठा का संकल्पित चारण

अपने मन्दिर, मस्जिद, गिरजे
मैंने ही श्रद्धा से सिरजे

मानव-भेद सौंपने वाले !

उर की गिरा गगन चीरेगी
अब तो उमर यही बीतेगी
अपनी नज़र यही रीतेगी

मेरे पथ को आँधी दे तू, बिजली गिरा घरौंदे पर भी
अपने लिए कल्पतरु रखले, पतझर मेरे पौधे पर ही
मैं भी नई सृष्टि रच लूँगा, मेरा कलाकार संसारी
तू रख लाख-लाख हूरों को, मेरी लाखों में है न्यारी

मेरे ये आमों पर झूले
नई कल्पना नभ को छूले

मुझको लगन सौंपने वाले !

आखिर जिजीविषा जीतेगी
अब तो उमर यहीं बीतेगी
अपनी नजर यही रीतेगी

गीत

मन तो बहुत उदास था
फिर भी आस नही टूटी !

पलकों में भारीपन था
कितनी बोझिल रातें थीं
आसमान की बाँहों में
ज़हरीली बरसातें थीं !

प्यासा हर विश्वास था
फिर भी साँस नही टूटी !

मन तो बहुत उदास था
फिर भी आस नही टूटी !

उसने सिर्फ़ पुकारा था
मैंने सिर्फ़ निहारा था
टूटे हुए सितारे का
शायद एक इशारा था

आकाशी उपहास था
उर की प्यास नहीं टूटी !

मन तो बहुत उदास था
फिर भी आस नहीं टूटी !

चैन गया था जनमों का
ऐसा दर्द जगाया था
रोज़ डूबते सूरज ने
दिल को बहुत डराया था !

वातावरण निराश था
चित की फाँस नहीं टूटी !

मन तो बहुत उदास था
फिर भी आस नहीं टूटी !

गीत

पंछी लौटे डेरे !
तू मान भी जा मन मेरे !
वे भी लौटेंगे !

मेरी मुंदी-मुंदी पलकों पर
मेरी घनी-घनी अलकों पर

उनकी देह-गन्ध के फेरे !
पंछी लौटे डेरे !
वे भी लौटेंगे !

मेरी बड़ी-बड़ी आँखों में
उनके सपनों की पाँखों में

मत उलझा यूँ आँसू तेरे !
पंछी लौटे डेरे !
वे भी लौटेंगे

मेरी प्यार भरी मनुहारें
उनके पथ के शूल बुहारें

मेरे प्राण हैं उनको घेरे !
पंछी लौटे डेरे !
वे भी लौटेंगे !

●

मुक्तक

रुलाने को सभी आते हँसाता कौन चलता है ?
जलाकर ही सभी जाते, जलन को कौन हरता है ?
बहुत अच्छा हो इससे तो कि अपना न बने कोई
बिछुड़ने को सभी मिलते, बिछुड़कर कौन मिलता है ?

ओ मेरे अनजान शत्रुओ !

जिसको भी मैंने अपनाया
जिसने भी मुझको दुलराया

दोनों प्यासे रहे, न जाने
कैसा शाप दिया है तुमने ?
कैसा पाप किया है मैंने ?

मैं यथार्थ का बोझ ढो रहा, यौवन की जलती दुपहर में
जाने किस तट ला पटका है, जीवन की अनजान लहर ने ?
भूला बिसरा आदि अंत है, वर्तमान भी निपट अपरिचित
पता नहीं साँसों का धन भी कितना किये हुए हूँ संचित ?

दिशा भ्रमित सा रहता हूँ मैं
ठगा, चकित-सा रहता हूँ मैं
मेरे जैसे जो करते है
यन्त्र-चलित-सा करता हूँ मैं

जो भी दर्द बँटाने आया
जिसका दुःख लेने मैं धाया

दोनों शंकित रहे, न जाने
कैसा घाव दिया है तुमने ?
कैसा चाव किया है मैंने ?

मैं अपने-से हुआ अपरिचित दर्पण से हो गई शत्रुता
मैं यथार्थ से यूँ परिचित हूँ अविश्वास दे रही सत्यता
दिशा-दिशा से सम्मोहन है, अंग-अंग छूटा पड़ता है
मन है जिससे संघर्षण है, काँसे-सा टूटा पड़ता है

कैसा क्रम है, कैसा भ्रम है
कुछ होता है, कुछ लगता है
हृदय-हीन के घर-आँगन ही
दिलवालों का दिल लगता है

जिसके साथ चला राहों में
जो भी आन बँधा बाँहों में

दोनों व्याकुल रहे, न जाने
कैसा ज्ञान दिया है तुमने ?
कैसा ध्यान किया है मैंने ?

भाग्य एक धब्बा है केवल, जो जीवन मे लगा हुआ है
किन्तु सभी संकल्प सो गए, बेबस मन ही जगा हुआ है
प्यार और पुरुषार्थ एक हैं जैसे किसी नीड़ की टहनी
ऐसी उमर मिली हमको तो, भूखे तन से टिकी नसैनी

ओ, मेरे अनजान शत्रुओ
या तो मेरी साँसें लेलो !
या मेरे सम्मुख आ जाओ
विश्वासों की घातें झेलो !

जो तुम जहर घोलते मुझमें
जो तुम घुटन खोलते मुझमें

दोनों बहते रहे, न जाने
कैसा धर्म दिया है तुमने ?
कैसा कर्म किया है मैंने ?

प्रतीक्षा है

दर्द मिल गया, प्यार मिल गया
सपना तक साकार मिल गया
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नहीं वह किसकी है !
नाम नहीं, वह जिसकी है !

प्यार मिला महुए जैसा
महका – सा, मदिराया – सा
पलकों – पलकों, सपनों – सपनों
तन में प्राण समाया–सा

प्रीत उमर की नैया है
अपनी आप खिवैया है
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नहीं वह किसकी है !
प्रीत नहीं, वह जिसकी है !

दर्द मिला जमुना – जल–सा
याद भरा, अवसाद भरा
तड़पन में कूजन जैसे
जोगी हो उन्माद भरा

दर्द बिना मन अन्धा है
जीवन गोरखधन्धा है
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नहीं वह किसकी है !
दर्द नहीं, वह जिसकी है !

भाग्य मिला वृन्दावन – सा
पूजन और समर्पण का
मधुर विरह का, चिर यौवन का
जल में दीप विसर्जन का

जब अस्तित्व समर्पण है
क्षण, विराट का आँगन है
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नहीं वह किसकी है !
ईश नहीं, वह जिसकी है !

युग पाया चन्दन – वन – सा
सर्पों के आलिङ्गन मे
समय रुका–सा लगता है
हर फणिधर के चुम्बन में

नीलकण्ठ, मृत्युञ्जय हूँ
नई आस्था, नया उदय हूँ
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नही वह किसकी है

शायद अगले युग की है
शायद नये मनुज की है
शायद मौन प्रलय की है
नाम नहीं, वह जिसकी है !

दर्द मिल गया, प्यार मिल गया
सपना तक साकार मिल गया
फिर भी एक प्रतीक्षा है
पता नहीं वह किसकी है !

विदा दो आँसू

अब दुःख से भी परे ले चले भले सताने वाले
उठो, उमड़कर मुझे विदा दो आँसू सपनों वाले !

ये जिनके मासूम इरादे, वार बहुत गहरे हैं
जीव न प्यार करे जीवन से ये देते पहरे हैं
ये दुःख से आतंकित करते, ये सुख के निर्णायक
बहुत भले हैं, बहुत भले हैं ये भवितव्य विधायक

हमें अकेले राह न झेले
दुनियादारी मेले – ठेले
सब अटकाने वाले !
भले सताने वाले !

उठो उमड़कर मुझे विदा दो आँसू दर्पण वाले !!

उर गुलाब को झरी पँखुरियाँ, सूखी, महक न छूटे
आशाओं का बोझ बढ़गया टहनी खुद ही टूटी
अस्त सूर्य था, तमस घिरा, पर करुणा जगी प्यार में
जगकी सूई रही बीधती, पोया नही हार में

अब कोई दुलराए कैसे ?
सँगी बाँह बढाए कैसे ?

झूठे साथ निभाने वाले !
भले सताने वाले !
उठो उमड़कर मुझे विदा दो, आँसू भोले भाले !

मन का शंख बहुत फूंका था प्रिय छवि के अर्चन मे
अखिल सृष्टि का पावन पानी भर लाया अँखियन मे
अर्पण का क्षण, पूजा का मन, जीवन ही तर जाता
अगर न टूटे विश्वासों का धोखा विष भर जाता

मीत खो गये, गीत खो गये
सपने तक बदनाम हो गये

आहत रात जगाने वाले !
भले सताने वाले !
उठो उमड़कर मुझे विदा दो आँसू सुधियों वाले !

जीवन-बरगद हुआ खोखला, सूनो साँस-बसेरा
गुनगुनकहाँ, कहाँ मधुरितुएँ, उमर अभागी-डेरा
सुबह दहकती, साँझ बिलखती, सरदोपहर ऊँघती
कभी-कभी सुख की गौरैया शायद नाम पूछती

अब मौसम भी असर न करते
राग न भरते, आग न भरते
फीकेपन तक लाने वाले !
भले सताने वाले !
उठो उमड़कर मुझे विदा दो, आँसू अमृत वाले !!

अब दुःख से भी परे ले चले भले सताने वाले !
उठो उमड़कर मुझे विदा दो आँसू सपनों वाले !!

प्यार की प्यास

लहर से मिल नाव धोखा दे गई
तो क्या करोगे ?
प्यार की यदि प्यास नफ़रत से गई
तो क्या करोगे ?
आदमी पर आदमी का ज़हर इतना
चढ़ गया है !
ज़िन्दगी खुद ज़िन्दगी को ले गई
तो क्या करोगे ?

●

कभी तुम याद कर लेना

किनारे पर चलेंगे या कभी
मँझधार तर लेंगे
सही जो प्यास, सह लेंगे,
सितारों-सा निखर लेंगे
बिछुड़कर भी मिलेगा मौन,
हमको जोत बढ़ने का
कभी तुम याद कर लेना,
कभी हम याद कर लेंगे !

प्रेरणा से

कविप्रिया, मत कहो और भी माँग लूं
स्वप्न तुमने दिया, सार तुमने दिया
दर्द तुमने दिया, प्यार तुमने दिया
होंठ तुमने लगा, ज़हर को पी लिया
पाप मैंने किये, भार तुमने लिया
और मुझको भला क्या अधिक चाहिये ?
साँस मैंने भरी, फूल बन तुम खिली
आँख मैंने भरी, बूंद बन तुम मिली
शूल मेरे चुभा, घाव तुमने लिया
म्हेंदिया करतलों से मगन कर दिया
और मुझको भला क्या अधिक चाहिए ?
कविप्रिया, मत कहो और भी माँग लूं

स्वप्न तुमने दिया, सार तुमने दिया !

मैं बुझा तो कहा सूर्य आया नहीं
मैं रुका तो कहा लक्ष्य पाया नहीं

मैं चला तो नया पंथ ही दे दिया
साथ माँगा तो नभ हल्दिया कर दिया
और मुझको भला क्या अधिक चाहिए ?
कविप्रिया, मत कहो और भी माँग लूं

स्वप्न तुमने दिया, सार तुमने दिया !

जन्म-जन्मातरों तक मधुर पीर ले
प्राण में रूप ले, नयन में नीर ले

मैं न कुछ लूं सभी को लुटाता चलूं
प्राण, इतना मुझे प्यार तुमने दिया
देह को यूं छुआ बाँसुरी कर दिया
और मुझको भला क्या अधिक चाहिए ?
कविप्रिया, मत कहो और भी माँग लूं

स्वप्न तुमने दिया, सार तुमने दिया
दर्द तुमने दिया, प्यार तुमने दिया
होठ तुमने लगा जहर को पी लिया
पाप मैंने किये भार तुमने लिया

और मुझको भला क्या अधिक चाहिए ?
कविप्रिया, मत कहो और भी माँग लूं !

फेण्टेसी

चाँदनी की बादली से भरा हो गगन
तले बनी हो मगन-मुग्ध
नन्ही-सी कुटिया
तोतले सुनाती गीत लाडली कलियों से भरी
शंख लगाए मुँह नीलपुष्पों से जड़ी
छोटी-सी फुलवारी हो
सबके घरों मे हो !
किन्तु न्यारी-न्यारी हो !

दुबला-सा रास्ता हो
सबसे ही वास्ता हो
मिलके चलाता हो
दूर-दूर क्षितिज के भी पार चला जाता हो !
बंशी बजाता कोई मस्त चला आता हो !
नदी का परस किया समीरण गाता हो !
जीवन गुंजन-गीत सबको सुनाता हो !

सोचता हो मन
तन श्रम से निहाल हो।
चार रोटी, तनिक मधु
थोड़ी–सी दाल हो!
वस्त्र सिर्फ़ ढांपने को, देह तनिक तापने को!
भावों का मान हो, जीवन की तान हो
प्राणों में गान हो!

साथ–साथ सुख–दुःख बाँटने– बँटाने वाला
काव्य–सा सरल–महान
एक–कोई प्यार भरा दिल का अभिमान हो!

आंधियां थमजाएं

आंधियाँ थम जाएँ, ऐसा गीत गा दे मन !
सुन जिसे सब कल्पनाएँ
शीश को थपकाएँ ऐसा गीत गा दे मन !

देख बरगद की घनेरी छाँह पलभर थकन सो जाए
हृदय में वो शीतवर्णी पुलक जागे जलन खो जाए
हरित पीपल पात जैसे
ताम्रवर्णी रात जैसे
चेतना की तारिकाएँ
ज्योत्सना सरसाएँ, ऐसा गीत गा दे मन !

नीम फूलों की हवा मे आस्था की दहक घुल जाए
टूटते व्यक्तित्व की हर वासना मे महक घुल जाए
रजत लहरिल पंख जैसे
दुग्ध-फेनिल शंख जैसे
कामना की जल्पनाएँ
मौन में जम जाएँ, ऐसा गीत गा दे मन !

झील की जल-जुन्हाई की मीन जैसे, मौंस हुलसाए
भाल पर यूँ क्षितिज फेरे हाथ, उलझे भाग सुलझाए
मोगरे के फूल जैसे
पुष्प-केशर धूल जैसे
आत्मा की कुल व्यथाएँ,
छुअन से झर जाएँ, ऐसा गीत गा दे मन !

दिन से प्यारी रात, रात से प्यारी लगती शाम है !
उम्र आगई ऐसी जो बदनाम है !

स्वप्न सुनाने आते उसको लोरियाँ
गुड़िया पर इठलातीं जैसे छोरियाँ
पलक झंपाये चंदा आए बरजोरी
पलक उठाए बांधे केशर की डोरी
होठों पर अब जगी-जगी-सी प्यास का
बात मिलन की ऐसा मीठा नाम है !

उम्र आगई ऐसी जो बदनाम है !
दिन से प्यारी रात, रात से प्यारी लगती शाम है !

भोली आँखों में तिरती परछाईयाँ
हर आहट पर धड़कन में शहनाईयाँ

सलज कपोलों पर अब जुगनू जलते हैं
घटनाओ की आशाओं मे पलते हैं
खुलने को जो बंधी-बंधी अँगड़ाई है
नादानी का पावनतम परिणाम है !

उम्र आगई ऐसी जो बदनाम है !
दिन से प्यारी रात, रात से प्यारी लगती शाम है !

मुक्तक

संध्या की लाली में उलझे घुंघराले-काले बादल फिर
अधमुंदे नयन पह सूर्य-किरण छुपआँज रही है काजल फिर
चन्दा झांका, चुप हटा ज़रा, सुरमई रेशमी आँचल फिर
भर आये दो नयन बावरे, बेकल-घायल-पागल फिर

यह कैसा अनुराग, राग से नाता टूट रहा !

जितना अर्पित होता हूँ मैं
उतनी ही बढ़ती लाचारी
जितना साँसों में सम्वेदन
उतना ही रहता मन भारी !

पाने का त्योहार, द्वार तक आकर रूठ रहा !
यह कैसा अनुराग, राग से नाता टूट रहा !!

निर्झर में जितने जल कण हैं
मेरे उतने ही बन्धन हैं
गिरिवर से सागर तक पहरे
कहने को अपना तन मन है !

बोझिल हुआ सुहाग मुक्त-मन पीछे छूट रहा !
यह कैसा अनुराग राग से नाता टूट रहा !!

डगर अजानी चाल अटपटी
उस पर प्यासा जनम-जनम का
तुमने सौंपी दृष्टि प्यार की
भूल गया जीना जीवन का

प्यार हुआ व्यापार, तौलकर सबकुछ लूट रहा !
यह कैसा अनुराग, राग से नाता टूट रहा !!

मुक्तक

मैं आया हूँ तेरे द्वारे तीरथ लेकर
नयनन-गंगा, तन-चन्दन, उर-मन्दिर खोले
मैं ही तो आया हूँ एक पुजारी ऐसा
तू बनजा भगवान, सभी कुछ मुझ से लेले !

तारों में आकाश फँस गया
रात बहुत उलझी उलझी है

किसी दिशा ने नहीं पुकारा
भूल गया हूँ नाम तुम्हारा
प्यास लगी, विश्वास नहीं है
जीवन का आभास नहीं है
दिल सूरज-सा डूब गया है
मन तारे-सा टूट गया है

नस–नस में तेजाब भर गया
रात बहुत उलझी-उलझी है !

धरती का धरतीपन छूटा
नभ का नील फफोला फूटा
पल-पल, कण-कण में तड़पन है
आज घुटन है, बहुत घुटन है
साँसें ठहर गईं, ठिठकी हैं
आने को अन्तिम हिचकी है

आँसू सोता सपन डस गया
रात बहुत उलझी उलझी है !

किस तारे को गीत सुनाऊँ ?
किस चंदा को मीत बनाऊँ ?
रिक्त भावना भी बोझिल है
बचपन से ही कच्चा दिल है
सत्य स्वयम् ही एक भरम है
पापों का भी एक धरम है

दृष्टि-द्वार का दिया बुझ गया
रात बहुत उलझी-उलझी है !

गीत

क्यों उदास हो जनाब ?
कौनसी कली गिरी ? कौनसा सपन झरा ?
कौनसा दिया बुझा स्नेह से भरा-भरा ?
क्यों उदास हो जनाब ?
बात क्या हुई कि आँख है भरी-भरी हुई !
छू रही किरण मगर नज़र डरी-डरी हुई !
चूमने को आगई हैं मौसमी खुमारियाँ !
होंठ की रँगीनियाँ मगर झरी-झरी हुई ! !

कुछ जवाब दो जनाब !
कौनसा हृदय लुटा ? कौनसा कसक उठा ?
कौनसा पिया बिना, 'पिया'-'पिया' टसक उठा ?
क्यों उदास हो जनाब ?

देखलो गगन झुका ही जा रहा है झूमकर !
दिखा रही धरा नई-नई बहार घूमकर !
मिल रही लहर-लहर ! लो हिलोर आगई !
लो गुज़र गई निशा, सुहास भोर आगई !!
अब जवाब दो जनाब !

कौनसा वचन गया ? कौनसा कदम रुका ?
कौनसा उदार द्वार झाँकता झुका-झुका ?
क्यों उदास हो जनाब ?

कौनसी कली गिरी ? कौनसा सपन झरा ?
कौनसा दिया बुझा स्नेह से भरा- भरा ?

मुक्तक

ज्ञानी बनने से मुश्किल है दीवाना बनकर जी लेना
दिल के घाव उधरतें हों तब अपने होठों को सीं लेना
मयखाने में साक़ी के हाथों से पीना बहुत सरल है
मुश्किल है झंझावातों में ग़म भूम-झूमकर पी लेना !

साथ पाकर तुम्हारा

साथ मे तो कई चल रहे हैं मगर
साथ पाकर तुम्हारा, मजा आगया !

आँसुओं की झड़ी थी कभी, पर अभी
बात सुख की जँची, पीर छलना बनी
रात ने भी हमीं से करी मसखरी
नींद भी छीन ली और सपना बनी

देखने को मधुर स्वप्न अनगिन मगर
स्वप्न आया तुम्हारा, मजा आ गया !

चाँद भी कुछ लजाया हुआ लग रहा
सितारों के होठों पै मुस्कान है
डगमगाया हुआ है गगन या धरा
या हमारे डगों की ही यह शान है ?
साँझ की भोर की शक्ल देखी मगर
झेंप जाना तुम्हारा, मजा आगया !

मित्र ऐसे मिले बांधते ही रहे
नित नई चाल से, नित नई भूल से
हम चमन से बचे किन्तु अनजान में
जान ऐसी बँधी अधखिले फूल से !
उलझनों में फँसे ही रहे हैं मगर
रूठ जाना तुम्हारा, मजा आगया !!

हम रहें न रहें बात चलती रहे
प्यार जिसको मिला जिंदगी भा गई !
तुम रहो न रहो पर यही सच रहे
रूप जिसको मिला रोशनी आगई !
देवता कुछ नहीं दिव्यता कुछ नही
रूप देखा तुम्हारा, मजा आगया !

मस्तियों में बढे ही चले जारहे
होश किसको यहाँ, दर्द कैसे उठे !
रास्ते में कहीं मंजिलें खोगई
कुछ पता ही नहीं पाँव कैसे उठे !

यूं वड़े दुदुमीबाज हैं हम मगर
जोश पाकर तुम्हारा, मजा आगया !

जिन्दगी क्या ? तुम्हारा नशा छा गया !
मौत है, होश अपना बचाना यहाँ !!
होश को हमने देखा है बेहोश होकर
पड़ा है नजर को चुराना यहाँ !!

और बेहोश होकर तुम्हे पा गये
होश पाकर तुम्हारा मजा आगया !!

साथ मे तो कई चल रहे हैं मगर
साथ पाकर तुम्हारा, मजा आगया !!

●

मुक्तक

मैंने तो जीवन को निर्झर-सा माना है
पत्थर के सीने से उठना है, गाना है
राहो के रोड़ों के ऊपर से बहकर के
मस्ती से, मस्ती से वहते ही जाना है !

तीन मुक्तक

मिलने को तो बहुत से मेहरबाँ मिले हैं
मगर आफ़तों के वही सिलसिले है
फफोलों को तुमने जो फूंका है प्राण !
पुराने मिटे पर नये उठ चले हैं !!

●

जो अपनी ही अँगड़ाई पर मर जाते है
उनको यह दर्पण भी बहुत छला करता है
जो सीमा में बँधकर भी उफ़ना करते है
उनका पलभर में उत्साह भला करता है !

●

मै तो लुटा पुजारी बोलो अब क्या भेंट चढ़ाऊँ ?
जिन हाथों ने शूल बुहारे कैसे उन्हें बढ़ाऊँ ?
प्यासी उम्र दे सकी जितना छली जगत ले बैठा !
उर में घाव, नयन में आँसू, तुमको कहाँ बिठाऊँ ?

चतुर्थ खण्ड

जननि जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि

अगर ज़िन्दगी सिर्फ़ अपनी ही होती
सपने न होते, सुधियाँ न होती
न संकल्प होते, न विश्वास होता
कमायी फसल की खुशियाँ न होतीं

मेरे देश मैं तुझे इसलिये प्यार करता हूँ

मेरे देश, मैं तुझे प्यार करता हूँ
तो इसलिये नहीं कि तू मेरा है
कि साफ नीली आँखों-सा तेरा आकाश है
कि बुद्ध की करुणा, ईसा की क्षमा
मोहम्मद की ईमानदारी और
गाँधी की सच्चाई-सा तेरे सूरज का प्रकाश है
कि सब प्यार करें
और सबके लिये मुक्त करें
ऐसा सौंदर्य है तेरे चांद-तारों में
कि तेरी ऋतुओं में सृष्टि के कायाकल्प की क्षमता है
कि तेरी सरिताओं में संस्कृति की लय है
कि तेरे निर्झरों में

स्वस्थ कपोलों का जादू है
कि तेरे अन्न में रस
और तेरी मिट्टी में यश भरा है !

मैं तो तुझे इसलिये प्यार करता हूँ
मेरे देश,
कि दुनिया भर के लोग तुझे प्यार करते हैं,
तुझे प्यार किये बिना कोई रह नहीं सकता
कि खगोल का शून्य
अंतर्निहित प्रभाएँ केवल तुझपर ही सम्पूर्णता से बिखेरता है !

मैं जो तेरी मिट्टी में ही मिलना चाहता हूँ
मेरे वतन ! तो इसलिये नहीं कि करुणामय हिमालय
अपना हृदय तेरे मैदानों में ही बिछाता है
कि तेरी फसलों का दूध
हमें पौरुषमय बनाता है
कि विश्व के प्रफुल्लतम अधरों से भी मधुर
तेरे फलों का रस है
कि स्वाधीन समाज के शिशुओं की किलकारियों-सा
तेरी जीवन-दृष्टि का उल्लास है
कि तेरी ही बलिष्ठ भुजाओं पर
यह पूर्वी गोलार्द्ध टिका है !
मगर मैं तो मेरे वतन, तेरी गोद में इसलिये मरना चाहता हूँ

कि लाखों बरसों से विश्वभर के आततायी
तेरी तरफ ही झपटते आये हैं
और तूने मेरी शहादत की चुटकी भर राख से
उन अन्धों की आँखें खोल दी हैं
मुझे अमरता और उन्हें इन्सानियत दी है !

मेरे देश, मेरे पिता !
पुनर्जन्म होता हो या नहीं
मैं जो अनन्तवार इसी वसुधा पर जन्म लेना चाहता हूँ
तो इसलिये नहीं कि पृथ्वी की धड़कनें इसी तरफ सुनाई देती हैं
कि भूलोक अपना हर अनुभव तेरी चेतना से पाता है
कि इतिहास तेरी पदचापों को गाता है
कि मनुष्य-कामनाओं को संस्कार सौंपने का
कष्ट-साध्य कर्त्तव्य तू निभाता है
कि संस्कृतियों की दूरी का अवसाद
तू उठाता है
कि भविष्यत को जनमाने का दारुण प्रदाह
तू अपने कण-कण में रमाता है
अपने लोक संगीत में छुपाता है !

मैं तो मेरे पिता,
इसलिये तेरी फुलवारी में बार-बार खिलना चाहता हूँ

सीमा के सरदार

सीमा के सरदार !
तुम्हारे पीछे हम तैयार !
कपट का सीना फाड़ो रे !
शत्रु पर झपट दहाड़ो रे !
शांति की आन निभानी है !
सत्य की प्यास बुझानी है !

ये भारत ऐसा देश !
युद्ध के सैनिक जैसा वेष !
कण्ठ पंजाब, शीश कश्मीर,
बाजु हम्मीर,
पहाड़ों का सीना रणधीर !
हिमालय तो भारत का शंख !
शत्रु के प्राण उड़ें निष्पंख !

फूंक से दिशा उघाड़ो रे !
साँप के दाँत उखाड़ो रे !

विजय की यही निशानी है !
युद्ध की माँ क्षत्राणी है !
सीमा के सरदार.........!

ये इतिहासों का लेख !
विश्व हक्का-बक्का है देख !
पचनद पँचधारी तलवार
अबुझ अंगार,
वीरता हर सिर पर तैयार
मरण का पर्व मने हर वर्ष
जिन्दगी का हो दूना हर्ष

जोश गज-घोष चिघाड़ो रे !
शत्रु की धजा बिगाड़ो रे !

सिंध पर चढ़ी जवानी है !
वर्फ़ में धधका पानी है !
सीमा के सरदार......... !

ये संस्कृति का ध्वज-गान !
गूंजता आद्य-देश अभिमान !
जागृत आत्मा का आकाश !

अमिट विश्वास,
मनुजता का निःशेष निवास !
सत्य का सूरज छाया करे
खलों का रक्त जलाया करे

पूतना को फिर ताड़ो रे !
कंस का वंश उजाड़ो रे !

एकता अमर बनानी है,
हिन्द की धरती दानी है !
सीमा के सरदार............ !

ये शब्द-ब्रह्म-उद्‌घोष !
'चंद' के छंदों में पुनिरोष,
आज फिर 'पीथल' करे पुकार,
उठो हुंकार,
निराला की मिट्टी पर वार !
'राम की शक्ति' टूट कर पड़े !
भारती खप्पर लेकर बढ़े !

कलम के बजो नगाड़ो रे !
तिरंगा रिपु पर गाड़ो रे !

बीसवीं सदी न आनी है !
नये को नींव भरानी है !
सीमा के सरदार........ !

●

जनता होटल

आज नई ग्रौलाद पी रही
पंचशील की घुट्टी
उनके बाप शराबे-गम के घूंट भरा करते हैं
बुरे-बुरे सपनों का बोझा ढोते-ढोते
आते हैं हर शाम यहाँ जनता होटल में
दिन भर की सब चतुराई
यहीं बहाई जाती है
और मिलाई जाती है
अपनी मिटती अभिलाषा को
लाल-ललकते, तरल जहर में
घोल-घोल कर

माँस हड्डियों पर से नोच-नोचकर खाते-खाते
राजनीति की छाती पर
अपनी दमित कामनाओं की चक्की धर कर
जोर-शोर के साथ चलाई जाती है
क्योंकि जिन्दगी की रग-रग में
आज 'मफिया' भरा हुआ है
नई जवानी, नई चेतना, नये खून का दौरा
बिल्कुल रुका हुआ है !

क्योंकि दोस्तो ! ऐश गुलामी में करने वाले
हर मूर्ख देश के प्रजातंत्र मे
राजनीति, बीमार वेश्या-सी
मुफ़्त मिला करती है
भोगी हुए देश को
बिगड़े हुए भाग्य के रोगी हुए उदर में
खुले आम निगला करती है ।
आजादी की चमक-दमक तब
सत्ता की लिप्सा के हाथों
अफ़सरशाही की देहरी पर
आँसू-सी पिघला करती है !

जनता-होटल के हर मोटे-ताजे तन में
बूढ़ी-थकी, निढ़ाल रगों को

ऐंठाया है कुण्ठाओ ने
और रुढ़ियो की गाँठो ने
तोड़ सकें ये जिनको
इतना साहस नही पिलाया है
इनके आज़ाद देश ने !

क्योंकि अनाज गैरों से आता
और घास का घी मिलता है
जिनमें सभी विटामिन हैं
पर साहस, गैरत और जवानी नही मिली है !
काश कि नैतिकता भी किसी विटामिन या
क्लोरोफिल में मिल जाती !
काश, भविष्यत की सरक्षक,
अब आजाद कामनाएँ तो
बाँध बनातीं अपनी बासी-सड़ी
गुलाम मनोवृत्तियो पर !

या, फिर इस पावनतम भू के भोले कवि के
भावुक उर का सच्चा-बिरवा
जनम नही लेता !
क्यो फिर वह टकटकी बाँधकर लगन लगाता
नई भोर की ओर !
क्यों फिर आज नई पीढी के

पांव भटक कर आते इस जनता होटल मे
क्यों फिर वे गम गलत किया करते
जीवन के हर पल में ?
ये जो अपनी सिगरेटों के धूएं मे
अक्सर झांका करते हैं
ये सब कायर हैं !
ये परवाने अब सौदागर हैं नेह-मोह के !
जल न सके जो अमर-प्यार की लौ मे
क्योंकि आज हर शमा
मुहब्बत की दूकान खोल बैठी है !
और ग़रीब देश के यौवन के पास
सिर्फ ग़म की पूंजी है !
वह भी असह्यनीय है
वह भी गलत समझकर, गलत करी जाती है !
हर नौजवान, जनता होटल मे बैठ
जाम पर जाम चढ़ाया करता है
सह लेता है बोतल भरा ज़हर
मगर नही सहपाता गम की एक घूंट भी !
और मरभुखी कायाओं के खोखले ठहाकों से
'जनता होटल' की हर शाम गूंजती रहती है !
जैसे कि घर-खंडहर में कोई
प्यासी आत्मा भटक रही हो !

मेरी ममता की मिट्टी से लिपटे
मेरे प्यारे देश !
वता, मैं किनसे, कैसे कहूँ आज पीड़ा तेरी ?
यह जनता होटल है
इसमें मुर्दों की टोली आती है
और कठोर सत्य सुनाने वाली
हर नूतन ज़िन्दा आवाज
घोंट दी जाती है !
प्यार यहाँ व्यापार बना है,
राष्ट्र यहाँ नीलाम चढ़ रहा,
मानवता का और ज़िन्दगी का बिज़निस है !
फिर भी
रम्मी में, ब्रिज में,
पानों की पीकों मे, धूएँ के छल्लों में
यह अजगर अहम् अटल है !

यह 'जनता होटल' है साथी,
यह 'जनता होटल' है !!

दे उपदेश

भारत की सन्तान को
दे उपदेश !
भूखी-नंगी जान को
दे उपदेश !
बतमीज इन्सान को
दे उपदेश !

जैसे चाहे भाषण झाड़
शेष चंदोवे को भी फाड़
चोरों से चोरी करवा
साहूकार से कह, मौज़ा
कंगालों से व्रत करवा
मरने का कर्त्तव्य सिखा

रोटी माँगे, दे उपदेश !
रोज़ी माँगे, दे उपदेश !
चीख पड़े तो, दे उपदेश !
मूक रहे तो, दे उपदेश !

भारत की सन्तान को !

मन गुलाम है, सेवा ले
आज़ादी का धोखा दे
जनता अपढ गँवार है
मूरख है, लाचार है
हाड तोड़ मेहनत करवा
इनकी मेहनत खुद खाजा

श्रमदानों का, दे उपदेश !
बलिदानों का, दे उपदेश !
जाग पड़े तो दे उपदेश !
सो जाए तो दे उपदेश !

भारत की सन्तान को !

सभी गधों को राजा कह
उल्लू को अधिराजा कह
चमगादड़ विद्वान हैं
गुण-गौरव की खान हैं
तोतों से सुन मर्यादाएँ
दादाओं की गूढ अदाएँ

समझदार को, दे उपदेश !
कलाकार को, दे उपदेश !
सृजन करे तो दे उपदेश !
भजन करे तो दे उपदेश !

भारत की सन्तान को !

उपदेशों का राग न छोड़
औरों की तकदीरें फोड़
औरों को परहेज बता
खुद चाहे इन्सान चबा
नैतिकता की लाश पर
अनुशासन की बात कर

सगे बाप को, दे उपदेश !
ससुर--सास को, दे उपदेश !
अच्छों को तो दे उपदेश !
सच्चों को तो दे उपदेश !!

भारत की सन्तान को, दे उपदेश !

दम घुटता है फूलों का

दम घुटता है फूलों का तो कली–कली लाचार
कैद करूँ भँवरों को, या लूं नयन निकाल मालियों के
बोलो किसकी साजिश है ये ? किस पर मौत सवार है ?

यह अटूट मौसम है कैसा, टूट गिरा सुख के सुख पर
क्या भँवरे, क्या माली, सबके पोत रहा कालिख मुख पर
सबकी रात चैन से बिछुड़ी, धीरज पाँखें टूटी
इस मौसम ने भरे बाग में बुलबुल की साँसें लूटी
इस मौसम को टलना होगा
तम को रूप बदलना होगा

ज्योतिपर्व मैं, ज्योतिकाव्य हूँ, लपटों का शृंगार है !
दम घुटता है फूलों का तो कली-कली लाचार है !

सदा सुहागिन विधवा लगती, हर सिंगार विवस्त्र हुआ
जूही कंगन लिए खड़ी है, निष्फल होती गई दुआ
जर्जर हुआ गुलाब, झुका है, चम्पा का जूड़ा ढीला।
किसकी सेज बिछी पुरवाई, गर्मी का आँचल गीला !
ऐसा कौन हुआ व्यापारी ?
सबके सौदे की तय्यारी ?

टूट जाएगी तुला, मनुजता अतुलनीय व्यवहार है।
दम घुटता है फूलों का तो कली-कली लाचार है !

चुपके से पाला पड़ता है, फूल घास के झुलस रहे
मोर कहीं दुबके बैठे हैं, घन-गिद्धों से हुलस रहे
माटी सिहर-सिहर जाती है, पवन प्रेत-सा डोल रहा
तितली साँस नहीं ले पाती कोई आहें घोल रहा
किसने आतंकित कर डाला ?
कौन हुआ अंतर से काला ?

बदलो मायावी ! कविता के जादू की ललकार है।
दम घुटता है फूलों का तो कली-कली लाचार है !

गुलमोहर मे आग नही है, लपटें नही पलासों में
बरस पड़े मधु मंजरियों से तड़प नहीं वो प्यासों में
गेंदा पीला पड़ा गमों से, कंचन काया अस्त हुई
ठंडी, झुकी डालियाँ सारी, हस्ती–हस्ती पस्त हुई
मुझसे सहन नहीं होता है
मुर्दा वहन नही होता है

चेतो, वर्ना आग लगाने कलम खड़ी तय्यार है।
दम घुटता है फूलों का तो कली–कली लाचार है !

क़ैद करूं भँवरों को, या लू नयन निकाल मालियों के
बोलो, किसकी साजिश है ये, किस पर मौत सवार है ?

मास्टरजी

राष्ट्र है ताँगा अगर, घोड़ा है मास्टर जी
नैतिकता है चटनी तो पकौड़ा है मास्टर जी
सच्चाई है मगर यह कि सरकार की कृपा से
शिक्षा की राह में स्वयम् रोड़ा है मास्टर जी

बेअक्ल के लोहे पै हथोड़ा है मास्टर जी
अनपढ़ की पीठ पर कड़ा कोड़ा है मास्टर जी
सच है कि हैं कम्पाउन्डर औरों की फुंसियों के
खुद अपनी जिन्दगी पर इक फोड़ा है मास्टर जी !

●

गीत

अमर राष्ट्र का नव समर जीतना है !
तुम्हें दुश्मनों का असर जीतना है !
कि मिट्टी की सौगन्ध सिर पर चढ़ाये
नया युग, नई चेतना जीत जाये !

कि सदियों पुरानी दिमाग़ी गुलामी,
रुधिर में उधर तिलमिलाकर उठी है !
इधर रश्मियों की अमित कल्पना से
नई चेतना झिल-मिलाकर उठी है।

लड़ाई तो अस्तित्व के बोध की है,
शहीदों की जननी के प्रतिशोध की है,
कि इतिहास की यामिनी बीत जाए,
नया युग, नई चेतना जीत जाए

जहाँ तुमने निज की समर्पण-शिखा से
नई वर्तिका का नया दीप जोड़ा,
वहीं तुमने घुटती, कलपती तृषा की
कँटीली अमावस का प्रतिबन्ध तोड़ा,

झिझको नहीं ओ ! मेरे साथियो तुम !
कि बाँहें पसारो, रहो अब न गुमसुम !
कि आज़ाद साँसों से विष रीत जाये
नया युग, नई चेतना जीत जाये !

अदेखे किसी शूल से जो बिंधी है
भ्रमर साहसी ढूँढती बावरी !
तुम्हारी डरी कुछ निराशा भरी है
झुकी नैन की शबनमी पाँखुरी !

इसी आँख की स्वाति का हूँ तृषित मैं,
मगर भावना की कमी से व्यथित मैं !
कि नज़रें मिलाओ, हृदय गीत गाये !
नया युग, नई चेतना जीत जाये !

अमर राष्ट्र का नवसमर जीतना है !

●

समूह–गान

हिमालय पर चलो साथी
हिमालय ने पुकारा है !

तिरंगे के सुदर्शन को चलाने का समय आया
हमारी शत्रुता क्या है दिखाने का समय आया
जिन्हें भ्रम हो गया था जानलें अब मौत से पहले
हमारी दोस्ती में जो हमें चाहे वही कहले
मगर जब हम बिगड़ते हैं दिशाएँ फड़क जाती हैं
हमारे दुश्मनों की छातियाँ भी तड़क जाती हैं

हमें कश्मीर ने टेरा
हमें आसाम ने हेरा

हमारे बाजुओं को आजमाने का इशारा है !
हिमालय पर चलो साथी, हिमालय ने पुकारा है!

सदा ![!] चोटियों का दूध पी-पीकर पले हैं हम
कि अपनी हड्डियों में वज्र लेकर के चले हैं हम
हमारे हौसलों को देख हिम से आग फूटेगी
शहीदों की शपथ हमको कमर दुश्मन की टूटेगी
हमारी देहरी तो गंग-जमुना का सिरहाना है
बढ़ें जो लांघकर आगे उन्ही का सिर गिराना है

हमें फिर समर में जाना
विजय का केतु फहराना

रणस्थल ने हमारी वीरता को ही निहारा है
हिमालय पर चलो साथी ! हिमालय ने पुकारा है

बताओ हम करोड़ों अर्जुनों को कौन रोकेगा ?
करे टंकार जब गाण्डीव किसकी ताब टोकेगा ?
हमारे भीम जब दुःशासनों का रक्त पीयेंगे
कहो तब दुश्मनों के घाव आकर कौन सीयेंगे ?
कि धोखेबाज़ को हम इस ज़मीं से ही मिटायेंगे
कि अमृत जो नहीं पीता उसे विष ही पिलायेंगे

जमाना जानले आदत
हमारी एटमी ताक़त

समय को शांति के इतिहास में हमने उभारा है !
हिमालय पर चलो साथी, हिमालय ने पुकारा है !!

हमारी देह में वीरांगनाओं का लहू बहता
सदा जो आग से खेलीं उन्हीं का दूध यह कहता
करोड़ों के अमर जनतन्त्र का कुछ हो नहीं सकता
हमारी शान्ति का दुश्मन घरों में सो नहीं सकता
हमें शिवनेत्र की सौगन्ध है अवसर न खोयेंगे
वतन के शत्रुओं के खून से बंदूक धोयेंगे !

हमें यूं एशिया बोला
पहन अंगार का चोला

वतन अपना सभी आजाद देशों का सितारा है
हिमालय पर चलो साथी, हिमालय ने पुकारा है !

हमारी आस्था

बहुत भोले हैं कुछ भावुक शिकायत साथ लाये हैं,
रहे हम शांति के इच्छुक उसी की बात लाये हैं,
कि हमने क्यों हमेशा ही जगत भर को निकट समझा ?
कि हमने युद्ध की तैयारियों को क्यों विकट समझा ?

कि हमने आदमी को तो हमेशा प्यार से देखा,
धरा को मां समझकर नित करुण-शृंगार में देखा,
हमारी भावना पावन सदा सत्यम्—शिवम् देखा,
हमारी दृष्टि में मधु है सदा ही सुन्दरम् देखा,

नहीं देखा गया हमसे परायी आँख का आँसू,
अणुबम से हरी पत्तों भरी हर शाख का आँसू,
निशा के रजनीगंधा में छुपाये बाल का आँसू,
उषा के कम्पई मुख के गुलाबी गाल का आँसू,

नही सोचा गया हमसे कि दुनिया में मरण खेले,
जगत भर के दिलों का प्यार मरघट में शरण ले ले,
किसी की जिन्दगी भर की सपूती कामना लुट जाय,
उर के पालने में झूलती मधु भावना लुट जाय,

अगर हमने तभी सबको समझ की बात बतलाई,
विनय से, प्यार से रहना, समय की बात बतलाई,
जमाने से कहा मतभेद, भ्रम के ही मुखौटे हैं,
अगर हम पास आजायें विभाजक वस्त्र छोटे हैं,

मनुज का हित सभी चाहें, जगत का सुख सभी पायें,
जुदा हों रास्ते चाहे समझ की बात समझायें,
सुफल अध्यात्म का मानें, कहीं विज्ञान का सोचें,
मगर जो भी जहां सोचें भला इन्सान का सोचें,

अगर हमने कहा सबको कि जीवन साथ जीना है,
सुखों से टूट जायेगा दुःखों का कवच झीना है,
कहो तब कौनसा हमने विकट अपराध कर डाला,
घृणा को प्यार की पुचकार से बर्बाद कर डाला,

अगर कुछ लोग बौराये, लिये बारूद चढ़ आये,
नही समझी क्षमा हारी, अगर कुछ धूर्त बढ़ आये,
धरा पर तीन–चौथाई, अभी भी ज्ञान रहता है,
करोड़ों में दनुज है तो अरब इन्सान रहता है,

बहुत घबरा के नफरत अब खुले मैदान आई है,
खुशी का वक्त आया है सचाई की भलाई है,
विजय इन्सानियत की हो घड़ी वो आज आई है,
अंधेरे के सगे बेटों से पर्वत पर लड़ाई है!

अरे! गीता जहाँ गूंजी वही ये वक्त आना था,
लड़ाई भी लड़ें कैसे हमी को यह दिखाना था,
कि जिनमें आत्मिक बल है वही सवर्ष जीते हैं,
ये भारत है, यहाँ के युद्ध में आदर्श जीते है,

कि अक्षय पंच तत्वों का भला बारूद क्या लेगी?
जहाँ है मृत्यु ही पूँजी वहाँ वह सूद क्या लेगी?
यहाँ पर जिन्दगी को मृत्यु से किसने बड़ा माना?
शहीदों को हमेशा काल के सिर पर खड़ा माना!

हमारी वीरता को आज तक कोई नही पहुँचा!
हमारे हौसलों की धार तक कोई नहीं पहुँचा!
हमी ने शत्रु को सौ बार चेता करके मारा है!
सरापा बन गया शैतान तब ही सिर उतारा है!

समझलें इसलिये वे सब नहीं जो आज तक समझे,
सुनी आवाज़ तो लेकिन नहीं जो साज़ तक समझे,
हमारा देश है यह युद्ध जो मुश्किल से करता है,
मगर जब युद्ध करता है तो पूरे दिल से करता है,

हमारे युद्ध में फिर शत्रु अंतिम बार जीता है,
समन्दर बन के आता काल उसका लहू पीता है,
तिरंगा क्रोध मे आकर जहाँ त्रिनेत्र खोलेगा,
समझलो शत्रु की छाती पें उस पल गिद्ध बोलेगा,

हमारी आस्था मिट जाय यह सम्भव नहीं होगा,
हिमालय द्वार से हट जाय यह सम्भव नही होगा,
कभी भी साप की फुफकार से हम डर नहीं सकते,
ये जन्मेजय की धरती है क्षमा भी कर नहीं सकते !

मेरा देश गरीब कहाता

नदियों और सागरों वाला मेरा देश गरीब कहाता
खेतों और किसानों वाला मेरा देश गरीब कहाता
पर्वतराज हिमालय वाला, बद्रीनाथ शिवालय वाला
स्वर्ण मन्दिरों-शिखरों वाला, मेरा देश गरीब कहाता !
निर्धन कह कर दया दिखाते, भूखे आज बने हैं दानी !
नब्बे कोटि भुजाओं वाली शक्ति अभी तक है अनजानी !!

नौजवान से

तेरे रहते अमराई मे कोयल का गाना छिन जाए !
रुपयों के बदले धरती पर सावन का आना छिन जाए !!
जो युग का भाग्य-विधाता हो वह घूरे से खाना बीने !!
प्राणोत्सर्ग कर सकता हो वह डाकू-खूनी बन छीने !!!

एक वक्तव्य भी

राजस्थान की एक देशी रियासत के एक मध्यवर्गीय परिवार में जन्मा-पला बड़ा हुआ। चार वर्ष की उम्र की घटनाओं की स्मृति आज भी है। मन के आवेगों को निर्भीकता से प्रगट करने के संस्कार दिये पिता ने! ये संस्कार कुछ बड़े होने पर स्वाधीनता के लिये विद्रोह की अपराजित अन्तः पुकार में परिवर्तित हो गये! स्कूल और कॉलेज के दिनों मे दो-चार अध्यापकों को छोड़कर अधिकाश के प्रति नफ़रत ही बनी रही। परीक्षाओं को कभी पसन्द नहीं किया और पिता के व्यय का ध्यान आजाने पर ही उन्हें पास किया अन्यथा उनका तिरस्कार किया। मित्र मण्डली बड़ी-चढ़ी रही, चहार दीवारी मे मन कभी नही लगा। बचपन खेल के मैदान में, किशोरावस्था पब्लिक लाइब्रेरी में और जवानी होटलों में या फुटपाथ पर कटी। विज्ञान और कला दोनों को पाने के लिये जीवन बेचैन रहा। जीवन के सभी नहीं तो बहुत-बहुत से रंग देख लिये। आत्मानुभूति पर ज्यादा भरोसा किया, थोपे हुए विचार पर नहीं।

इतना बता देने के बाद मेरी अनुभूतियों और कविताओं की सीमाओं और सिद्धियों को कोई भी समझ सकता है !

बिना भूमिका लिखे या किसी दिग्गज से लिखाये और आधुनिकतम कही जाने वाली कविताएँ बिना दिये यह संग्रह इसी साहस के साथ प्रस्तुत कर रहा हूँ कि अपने किसी पाठक या समालोचक को पूर्वग्रह से ग्रस्त नही मानता और यह दावा भी नही करता कि हिन्दी कविता को कोई अनोखी चीज़ दे रहा हूँ। सहज, साधारण कविताएँ है, आपका प्यार पासकी तो बहुत है ! इससे अधिक मुझे कुछ नही चाहिए। हा, अगले काव्य-संग्रह की भूमिका लिखूँगा।

सस्नेह,
मंगल सक्सेना